बफ़ैज़े रूहानी **हज़रत सैय्यद शाह शम्से आ़लम हुसैनी**

रहमतुल्लाह अ़लैह (रायचूर)

बयादें

शैख़ुल मशाईख़ हज़रत अ़ल्लामा सैय्यद शाह चंदा हुसैनी सूफ़ी अशरफ़ी

सज्जादानशीन आस्तानाए आ़लिया शम्सिया अशरफ़िया रायचूर रहमतुल्लाह अ़लैह

माहनामा

सुन्नी आवाज़ नागपुर

चीफ़ एडिटर

मौलाना सैय्यद मुहम्मद हुसैनी

अशरफ़ी मिस्बाही

AUGUST 2014 Rs.20/-
Regd.No.144/w.s/997/88.
Hujjatul Islam Baname
Monthly SUNNI AWAZ
Mohalla Ganja Khet, Old Bhandara Road, Nagpur - 440 018. M.No. 09561080392

Tel. :NARANGI

Shop:- 2683532, 2683528
Resi :- 2762771
Taslim Bhai: 09823069706
Javed Bhai : 09823096665
Khalid Bhai: 09860346665

Taslim Fruit Company

Fruit Commission Agent Order Supplier
Shop No. 57,58,49. Kalamna Yard Nagpur-18.

Sunni Awaz Presents

Weekly SUNNI AWAZ Nagpur

News Paper is Coming Soon

अल्लाह के करम से ''सुन्नी आवाज़'' को ख़ालिस ख़ुदावन्दे कुद्दूस की ख़ुशनूदी और मस्लके अ़ाला हज़रत की तरवीज व इशाअ़त के लिए जारी किया जाता है। जिसने अपनी इशाअ़त के 30 साल मुकम्मिल कर लिए हैं। माहनामा सुन्नी आवाज़ (उर्दु एडिशन) और हिंदी एडिशन की कामियाबी के बाद अब ख़बरों की दुनिया में क़दम रखने जा रहा है।

हफ़्तावारी सुन्नी आवाज़, नागपूर बहुत जल्द मंज़रे अ़ाम पर आने वाला है। ख़्वाहिशमंद हज़रात आज ही अपनी कॉपी बुक करवा लें।

Weekly News Paper
SUNNI AWAZ Nagpur.
Old Bhandara Road, Ganjakhet,
Nagpur-440018. (M.s)
Mob. 09561080392.
mail@sunniawaz.com
www.sunniawaz.com

मज़हब ए अहले सुन्नत यानी

मस्लके आला हज़रत का बेबाक तर्जुमान

अगस्त 2014
जिल्द नं. : 1, शुमारा : 3

हुज्जतुलइस्लामबनामे

माहनामा सुन्नी आवाज़ नागपूर

चीफ़ ऐडिटर
मौलाना सैय्यद मुहम्मद हुसैनी
अशरफ़ी मिस्बाही

: ऐडिटर :
सैय्यद मुहम्मद अज़ीज़ुल्लाह हुसैनी ताहिर अशरफ़ी

: कमपोज़र :
मुहम्मद सलाहउद्दीन वास्ती

मस्लके आला हज़रत अकाबिरीने अहले सुन्नत की नज़र में

* मेरा मस्लक शरीअत व तरीक़त में वही है जो आला हज़रत मौलाना शाह अहमद रज़ा बरेलवी रहमतुल्लाह अलैह का है।
  (सैय्यद शाह अली हुसैन अशरफ़ी मियां)
* दीने इस्लाम व मज़हबे इस्लाम का सच्चा खुलासा मस्लके आला हज़रत है।
  (शेरे बेशए अहले सुन्नत मौलाना मुफ़्ती हशमत अली ख़ान)
* मैं मस्लके अहले सुन्नत पर ज़िन्दा रहा और मस्लके अहले सुन्नत वही है जो मस्लके आला हज़रत है।
  (मुबल्लिग़े इस्लाम मौलाना अब्दुल अलीम मेरठी)
* इस में शक नहीं कि आला हज़रत का मस्लक बिल्कुल हक़ है और जो उनके तरीक़े पर है वही ठीक है।
  (मलेकुल उलमा मुफ़्ती ज़फ़रूद्दीन बिहारी)
* फ़क़ीर का और फ़क़ीर के आबाओ अजदाद का वही मस्लक है जो मस्लके आला हज़रत कुद्दसिर्रहु का है।
  (अल-बरकात मौलाना मुफ़्ती सैय्यद अहमद क़ादरी)
* आला हज़रत के मस्लक व तहक़ीक़ात में किस का ज़ेहरा है जो जुरात लब कुशाई कर सके।
  (मुफ़्तीए आज़म दहली मौलाना मज़हरउल्लाह नक़्शबंदी)
* वो मेरा मुरीद नहीं जो मस्लके आला हज़रत के ख़िलाफ़ है।
  (मौलाना मुफ़्ती अहमद सईद क़ाज़मी)
* मेरा जो मुरीद मस्लके आला हज़रत से ज़रा भी हट जाए तो मैं उसकी बैत से बेज़ार हूं।
  (एहसानुल उलमा मौलाना मुफ़्ती सैय्यद शाह मुस्तफ़ा हैदर हसन)

प्रिंटर, पबलीशर, प्रोपराईटर मौलाना मुहम्मद सैय्यद हुसैनी अशरफ़ी मिस्बाही ने शम्सिया प्रिंटिंग प्रेस, गांजाखेत, नागपूर से छपवा कर दफ़्तर ''माहनामा सुन्नी आवाज़'', मुहल्ला गांजाखेत, नागपूर से शाए किया।
e_mail : mail@sunniawaz.com Contact No. : 09422146796
नोट : कानूनी चाराजोई की सूरत में सिर्फ़ नागपूर कोर्ट को ही हक़ हासिल होगा। अहले कलम के बाज़ मज़ामीन से इदारे का इत्तेफ़ाक़ ज़रूरी नहीं।

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

الصلوٰۃ والسلام علیک یا رسول اللہ ﷺ

नंबर	मज़ामीन	मज़ामीन निगार	पेज
1	आलमे इस्लाम सुलह कुल्लियत की ज़द में	मौलाना सैय्यद मुहम्मद हुसैनी अशरफ़ी मिस्बाही	3
2	वहाबियत नवाज़ किताबों का रद	मुफ़्ती अ़ब्दुर्रहमान साहब क़िबला	8
3	मुश्रिक कौन? (किस्त नं. 3)	मुहम्मद आ़क़िब ख़रबे क़ादरी सक़्क़ाफ़ी (शाफ़ई) मालेगांव	34
4	निकाह	मुफ़्ती ज़मीम अहमद मिस्बाही, नागपूर	39

अल्लाह के करम से ''सुन्नी आवाज़'' को ख़ालिस ख़ुदावन्दे कुद्दूस की ख़ुशनूदी और मस्लके आ़ला हज़रत की तरवीज व इशाअ़त के लिए जारी किया जाता है। जिसने अपनी इशाअ़त के 30 साल मुकम्मिल कर लिए हैं। माहनामा सुन्नी आवाज़ (उर्दु एडिशन) और हिंदी एडिशन की कामियाबी के बाद अब ख़बरों की दुनिया में क़दम रखने जा रहा है।

हफ़्तावारी सुन्नी आवाज़, नागपूर बहुत जल्द मंज़रे आ़म पर आने वाला है। ख़्वाहिशमंद हज़रात आज ही अपनी कॉपी बुक करवा लें।

Weekly News Paper Sunni Awaz Nagpur
Old Bhandara Road, Ganjakhet,
Nagpur-440018. (Maharashtra)
Cell : 09561080392

www.sunniawaz.com mail@sunniawaz.com

आ़लमे इस्लाम सुलहकुल्लीयत की ज़द में

इदारिया

अज़ : मौलाना सैय्यद मुहम्मद हुसैनी अशरफ़ी मिस्बाही, चीफ़ एडिटर : माहनामा सुन्नी आवाज़, नागपूर

गुमराहों और बदमज़हबों का एक गिरोह हमेशा ग़ैर मज़ाहिब के साहेबाने हुकूमत व दौलत के हाथों खिलोना बन कर मुसलमानों की कूव्वते ईमानी को कमज़ोर करने और उन्हें हक़ से हटाने की कोशिशे नाकाम में मसरूफ़ रहा।

हिन्दुस्तान में जब अंग्रेज़ हुकूमत क़ायम थी, गुमराहों व बदमज़हबों में ख़ुद को आ़लिम व फ़ाज़िल अ़ल्लामा फ़लां फ़लां कहला कर या किसी दारूलउलूम का बानी या उससे मुंसलिक हो कर या उलमा के नाम कोई जमियत क़ायम करके अहले सुन्नत को मिटाने और उन्हें कमज़ोर करने की कोशिश में मसरूफ़ रहा। जैसे देवबंदी, वहाबी, ग़ैर मुक़ल्लिद, वहाबी नाम निहाद अहले हदीस वग़ैरह और एक ग्रुप सुलह कुल्लियत की पालीसी अपना कर अहले सुन्नत को मुख़्तलिफ़ ख़ानों में तक़सीम करने की कोशिश में मसरूफ़ रहा।

सुलह कुल्लियत क्या चाहती है?

सुलह कुल्लियत एक अ़जीब पंजरंगी धरम है कि वो कोई मुस्तक़िल मज़हब नहीं रखती। अगर इसको किसी से कीना व दुशमनी है तो सिर्फ़ अहले सुन्नत व जमाअ़त से। कोई आ़लिमे दीन बदमज़हबों का रद्दोअबताल करे तो सुलह कुल्लि बोल पड़ेगा, ''किसी की बुराई करने और बदगोई करने से क्या फ़ाएदा, हम अपनी क़ब्र में जाएंगे, वो अपनी क़ब्रों में। किसी को क्यों बुरा कहें, इससे मिल्लत कमज़ोर होती है। मुसलमानों के तमाम फ़िर्क़े बाहम दिगर मिलजुल कर रहना चाहिए। अगर हम किसी को बुरा ना कहें तो वो हम को बुरा ना कहेगा'' वग़ैरह। अगर सुलह कुल्लियों के इस मक्र व फ़रेब को मान लें तो कुरआन की इन आयात का क्या जवाब होगा, जो कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन, यहूदो नसारा और मुनाफ़िक़ीन के रद्दोअबताल में नाज़िल हुई हैं। इनके साथ शिद्दत इख़्तेयार करने की कुरआन ने तालीम दी है। तर्जुमा : ''ऐ नबी जिहाद करो, काफ़िरों और मुनाफ़िकों पर और उन पर सख़्ती करो।'' इस आयते करीमा में अल्लाह ﷻ ने कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन व मुनाफ़िक़ीन यानी बज़ाहिर कलमा पढ़ कर ईमान का इज़्हार करने वाले और नमाज़ व रोज़ा व हज व ज़कात व जेहाद करने वालों के साथ सख़्ती इख़्तेयार करने की तालीम दे रहा है।

यहां सख़्ती से मुराद कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन व मुनाफ़िक़ीन के साथ तीर व तलवार ले कर क़त्ल करना और डंडा ले कर उन्हें पिटना मुराद नहीं है। बल्कि उनके नज़रियात व ख़्यालात और बातिल अ़क़ाईद से नफ़रत और बेज़ारी, अपने घर वालों को इस माहोल से और दूसरे मुसलमानों को दूर रखने की कोशिश करना और उन्हें उनसे महफ़ूज़ रखना है। कोई मुसलमान उनके बज़ाहिर कलमा व नमाज़ और नेक आ़माल से मुतास्सिर हो कर उनकी राह ना इख़्तेयार करे। इससे बार बार उनके अ़क़ाईदे बातिला से नफ़रत का जज़्बा पैदा कराया जाता है, वरना यह गुमराह यानी

नक़्ल असल में ज़म ना हो जाएं। इससे बहुत बड़ा ख़तरा पैदा होगा। आज यही हो रहा है, सिर्फ़ कलमागोई का सहारा ले कर सब को एक लड़ी में पिरोने की कोशिश की जा रही है। एक तरफ़ तो उलमाए अहले सुन्नत से सख़्त नफ़रत पैदा की जा रही है और दूसरी तरफ़ कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन व मुलहेदीन के साथ ख़ुशामद की जा रही है। कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन के साथ मदाहनत का तो यह आ़लम है कि, उनकी ख़ुशामद और चापलूसी में हर वो नाजाईज़ व घिनौनी हरकतें की जाती हैं, जिससे ग़ैरत व वक़ार और इस्लामी हमियत को शर्म आ जाए। उन्हें अपने घरों में इज़्ज़त के साथ बुलवाया जाता है, उनसे जलसों में तक़रीरें करवाई जाती हैं, उनको इज़्ज़त व एहतेराम से नवाज़ा जाता है। बिलख़ुसूस अहले ख़ानक़ाह व दरगाह वालों ने कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन, बेदीन व मुलहिदों के इस्तक़बाल और हर फूल पहनाना अपना मक़सद बना रखा है और यही काम बाअ़ज़ अहले सुन्नत के मदारिस ने भी इख़्तेयार कर लिया है। जैसे अशरफ़िया मुबारकपूर वग़ैरह।

इस्लाम और मुसलमानों के लिए यह कितना नाज़ुक वक़्त है कि हर तरफ़ इस्लाम और मुसलमानों पर यलग़ार है। कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन तो अपनी तमामतर ताक़त व कूव्वत सिर्फ़ उन्हें कमज़ोर करने और मस्लके अहले सुन्नत जो सिर्फ़ मस्लके आ़ला हज़रत के नाम से जाना जाता है, उसको फ़ना करने के लिए ख़र्च कर रहे हैं। चारों जानिब देखिए, सहीउलअ़क़ीदा सुन्नी मुसलमानों के लिए जीना दूभर है। सुलह कुल्लियों और नेचरयों ने सब से पहले कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन और अ़क़ाईदे बातिला रखने वालों से नफ़रत व बेज़ारी को ख़त्म करने की कोशिश की सिर्फ़ कलमागोई को मदारे निजात ठहराया। बज़ाहिर हर कलमा पढ़ने वाले बदमज़हबों और बद दीनों पर उनकी बद मज़हबी कुफ़्रोइलहाद की वजह से बहुक्म शरिअ़त नारी होने के हुक्म को रवादारी और दीनदारी के ख़िलाफ़ ठहराया। मुसलमान कहला कर कुफ़रियात बकने वाले को उलमाए अहले सुन्नत ने बहुक्म शरिअ़ते मुतहरा मुनाफ़िक़, काफ़िर व ज़िंदीक़ होने का हुक्म लगाया तो उसे ख़ल्क़े नबवी के ख़िलाफ़ बताया और उन उलमाए अहले सुन्नत के लिए गालियों की तोमार लगा दी और सल्फ़े सालेहीन को मईयूब ठहराया गया। इस फ़िरक़े के रद्दोअबताल की सख़्त ज़रूरत है, ताकि हमारा मस्लक आईंदा ख़लत मलत ना हो जाए।

सुलह कुल्लि इलहाद सब से पहले कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन, अहले बिदअ़त व हवा से वदाद व मुहब्बत की तालीम देता है। इसी का नाम रवादारी रखा है। उन सब से वदाद व मुहब्बत, उनसे उनसे अख़ूव्वत व भाईचारगी और रिशते नाते सब तोड़ लें। यही ईमान की अ़लामत है। उनसे मेल बरताओ से बाअ़ज़ रहना चाहिए। इसके ख़िलाफ़ सुलह कुल्ली और नेचरी रवादारी करते हैं इसी के बारे में हुज़ूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द रहमतुल्लाह तआ़ला अलैह, फ़तावए मुसतफ़ूया किताबुल ईमान–मस्ला ३५ में एक सवाल जो ज़ैल में है, उसके जवाब में फ़रमाते हैं, **मस्ऊला मौलवी अ़ज़ीज़ अहमद ख़ान वकील, मुहल्ला क़िला, बरेली :** क्या फ़रमाते हैं उलमाए दीन व मुफ़्तीयाने शरअ़ मतीन इसके मुतअ़ल्लिक़ कि, एक जुलूस राज गद्दी का अहले हुनूद (ग़ैर मुस्लिमों) निकालना चाहते हैं। जिसमें हुनूद औतारून (औतार) की सूरत में इंसान बिठाए जाते हैं और मजमए आ़म अहले हुनूद का उसके साथ होता है। मुसलमानों से इसरार किया जाता है कि वो बहालीए अमन और रिशतए इत्तेहाद मज़बूत करने के लिए उस जुलूस में चलें। अगर मुसलमान जुलूस के साथ चलते हैं तो लाज़मी तौर पर उससे राज गद्दी के जुलूस की ज़ीनत और शोहरत में इज़ाफ़ा होता है कि इस

हालत में मुसलमान बिला इरतेक़ाबे गुनाह किए हुए उस जुलूस के साथ चल सकते हैं या नहीं? और अगर चले गए तो गुनाह जो उन से सरज़द होगा, वो किस दर्जे का होगा? بَيِّنُواوَتُوجَرُوا

अल-जवाब

इसके हराम, हराम, अशद हराम होने में कोई कलाम नहीं। कुफ़्फ़ार के ऐसे कामों के महज़ तमाशे के लिए वहां चलना तो हराम है, ना कि रिशतए इत्तेहाद क़ायम करने के लिए कुफ़्फ़ार से रिशतए इत्तेहाद कुफ़्फ़री ही का काम है। मुसलमान का किसी काफ़िर से रिशतए इत्तेहाद क़ायम नहीं हो सकता। इस का मज़बूत करना कैसा, जो लोग इस नीय्यत से शरीक हुए, वो ज़रूर कुफ़्फ़ार से मुत्तहिद हो गए। इस्लाम से जुदा ऐसे उमूर की ताज़ीम से तजदीदे ईमान और तजदीदे निकाह लाज़िम, चाहे यह ताज़ीम ख़ुद की हो या हुकमन आज किसी हाकिम का हुक्म। इस लिए मान लिया गया और उसे हुक्मे कुफ़्र से बचाओ की ढाल समझ लिया तो कल बुतों को सजदे का भी हुक्म होगा और बेख़बर लोग जब भी तामीले सजदा करेंगे और उसे हुक्मे कुफ़्र से बचाओ की ढाल समझेंगे। यही लोग हैं, जिन्होंने ऐसी ऐसी कमज़ोरियां नुमायां करके इस्लाम को नज़रे कुफ़्फ़ार में (मआ़ज़्ज़ल्लाह) ज़लील किया है। (जैसे कि हज़रत मजुद्दिदे अल्फ़े सानी कुद्दसिर्रहु ने अपने मकतूबात जि. दूव्वम, मकतूब. 15 में फ़रमाया कि, ''मेल जोल से कुफ़्फ़ार में और मुर्तदों और बदमज़हबों में जुर्रात बढ़ जाती है।'') कल काफ़िरा इन से यही चाहेंगे कि, अमन और रिशतए इत्तेहाद को मज़बूत करने के लिए हमारे साथ उन उन कुफ़्रों में हमारी मुवाक़ेफ़त करो, हमारे साथ बुतों को सजदा करो, महादेव के आगे डंदूत बजा लाओ वग़ैरह वग़ैरह। अगर तुम ऐसा ना करोगे तो अमन ना रहेगा, मुसलमानों पर ज़ुल्म व सितम के पहाड़ तोड़े जाएंगे, यह होगा, वो होगा तो यह काफ़िरों से रिशतए इत्तेहाद करने वाले इस्लाम को काफ़िरों के आगे (मआ़ज़्ज़ल्लाह) ज़लील व रूसवा ठहराने वाले वो सब कुछ करेंगे। (इन्हीं मक्कारियों से वहाबी, नेचरी वग़ैरह अमन कमेटियां क़ायम करते हैं और उनमें सुलह कुल्ली इलहाद की इशअ़त करते हैं और ईदैन में मुश्रिकों को दावत देते हैं और बुज़ुर्गों के उर्सों में जलसे के नाम पर बद अ़क़ीदा व बद मज़हबों को बुला कर तक़रीरें करवाते हैं) फ़क़ीर यहां एक इबारत शरह फ़िक़ए अकबर से पेश करता है, तर्जुमा : ''जिसने सदा की तरफ़ यानी अहले कुफ़्र के इज्तेमा में नीरोज़ के दिन निकला, वो काफ़िर हुआ। क्योंकि उसमें कुफ़्र का ऐलान है। गोया कि उस पर उन की अआ़नत (मदद) की।'' महज़ तमाशे की हैसियत से जाने का यह हुक्म है। कुफ़्री जुलूस की पेशवाई और काफ़िरों से इत्तेहाद व सगाई पर ख़ुदाए जब्बार व कहार की किस क़द्र अशद तरीन लानत होगी। ऐसों को फ़ौरन तजदीदे ईमान व तजदीदे निकाह व तजदीदे हज, जबकि बीवी रखते हों, हज कर चुके हों, लाज़िम। والله تعالیٰ اعلم

हुज़ूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द रहमतुल्लाह तआ़ला अलैह के इस मुबारक फ़तवे से साबित हुआ कि, सुलह कुल्लि इलहाद से बचने के लिए नेचरियत और उसके सेकूलरिज़म से बचना हर सुन्नी मुसलमान पर फ़र्ज़ेऐन है। सुलह कुल्लियत और नेचरियत ही से मुसलमान मुर्तदों, बद मज़हबों से अपने मक़ाम में उन्हें बुलाने या उनके मक़ाम में जाकर बैठने की मुमानेअ़त बयान की गई है। यह भी साबित हुआ कि, कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन की दुनियावी मंज़िलत पर फ़रेफ़्ता हो कर मुसलमानों को बिलख़ुसूस उलमा को सुलह कुल्लि इलहाद से बचना चाहिए। अल्लाह ﷻ इरशाद फ़रमाता है,

तर्जुमा : ''ऐ सुनने वाले! काफ़िरों का शहरों में अहले गहले फिरना तुझे धोका ना दे।'' (कंजुलईमान–सूरए निसा, रू.20) इस धोके से मुराद वहाबी, नेचरी, सुलह कुल्लि वग़ैरह इख़्तेयार करते हैं। हुज़ूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द के बयान कर्दा हुक्म शरअ़ के ख़िलाफ़ कोई अहले सुन्नत का नाम ले कर उलमा में कोई मुदाहनत इख़्तेयार कर सकेगा?

अशरफ़िया मुबरकपूर सुलह कुल्लि अलहाद की तरफ़ :

पिछले साल बेंगलोर में ''जलसए यौमे हुसैन'' के नाम पर शीयों ने एक जलसा मुनक़िद करवाया। जिसमें वहाबी, शीआ़, हिन्दु, नेचरी मुक़र्रेरीन शरीक थे। इस में ख़ासतौर पर मुक़र्रिरे ख़ुसूसी के तौर पर दारूल उलूम अशरफ़िया मुबारकपूर के नाएब सदर मौलवी मुहम्मद इदरीस बस्तवी भी शरीक थे। इसमें जगत गुरू शंकर अचार्या और औधूकश महाराज और सेक्रेट्री ग्रूद्वारा बेंगलोर, प्रोफ़ेसर भाटिया सिंह, शिआ़ फ़िर्क़े का मशहूर आ़लिम और आसिफ़ शाही मस्जिद, लखनऊ का ईमाम कल्बे जव्वाद नक़वी भी शरीक था। इसके अ़लावा बहुत सारे सुलह कुल्लि, नेचरी शरीक थे। ख़ासतौर पर दारूलउलूम अशरफ़िया के नाएब सदर मज़कूरा शीआ़ आ़लिम के साथ बैठ कर तक़रीर कर रहे थे। सुलह कुल्लि यही चाहते हैं कि, मुल्क में हम ऐसी ही फ़िज़ा बनाएं कि जिसमें बिला तामिल हुनूद (ग़ैर मुस्लिम) भी शरीक हों और वहाबी, देवबंदी, मौदूदी, शीआ़ व ग़ैर मुक़ल्लिद (सलफ़ी) वग़ैरह शरीक हों, हम इस में ख़ूब खिल खिलाएं। इसकी इब्तेदा अशरफ़िया मुबारकपूर वालों ने और उलमा कौंसिल, मुंबई ने कर दिया है। अशरफ़िया मुबारकपूर का सुलह कुल्लि इलहाद की फ़िज़ा बनाने में गहरा दख़ल है। अशरफ़िया के नाएब सदर की शिरकत साफ़ गवाही दे रही है कि, अशरफ़िया से वो दीनी तसल्लुब जो हुज़ूर हाफ़िज़े मिल्लत के दौरे इक़्तेदार में था, अब अशरफ़िया वालों ने इसकी धज्जियां उड़ा दीं। अशरफ़िया मुबारकपूर ने खुली हुई इलहादी पॉलीसी पर अ़मल करना शुरू कर दिया है। यही हाल हिन्दुस्तान के एक ऐवाने बाला के साबिक़ मेम्बर का भी है कि इस मग़लूबुल ग़ज़ब (तेज़ मिज़ाज), मुतकब्बिर व मग़रूर गुफ़्तार के ग़ाज़ी ने इस्लाम व सुन्नियत व मस्लके आ़ला हज़रत को अपने किरदार व अ़मल से साबित कर दिया कि, ''मैं इस ज़माने में एक गुफ़्तार का ग़ाज़ी, उलमा का गुस्ताख़ व बेअदब मग़रूर व मुंकिर हूं। इसके ख़िलाफ़ मेरी आने वाली तहरीरों का मुताल्ला कीजिए।'' अब अशरफ़िया मुबारकपूर का माहौल ऐसी ही सुलह कुल्लि इलहाद के ज़द में आ चुका है। ऐसे इदारों से ऐसे बेअदब व गुस्ताख़, गुफ़्तार के ग़ाज़ी, मुतकब्बिर व मग़रूर, मग़लूबुल ग़ज़ब से बचना ज़रूरी है।

सुलह कुल्लि इलहाद का रद्द आयाते रब्बानी से :

अल्लाह ﷻ फ़रमाता है, तर्जुमा : ''तुम्हें तुम्हारा दीन और मुझे मेरा दीन।'' इस आयते करीमा की शाने नुजूल में यह आया है कि, कुफ़्फ़ारे मक्का ने रसूले अकरम ﷺ से कहा कि, ''आप एक साल हमारे माबूदों की इबादत करें और हम भी आपके माबूद अल्लाह तआ़ला की इबादत करेंगे।'' रसूले अकरम ﷺ ने फ़रमाया, ''ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता। मैं अपने दीने बरहक़ पर ही क़ायम रहूंगा। जैसा कि तुम अपने दीन पर क़ायम हो।'' इस आयते करीमा में सुलह कुल्लि इलहाद का रद है। अल्लाह तआ़ला ने सूरए निसा–रू.12 में इरशाद फ़रमाया, तर्जुमा : ''और इनमें किसी को ना दोस्त ठहराओ ना मददगार।'' इससे मालूम हुआ कि, तमाम बद मज़हबों से वदाद व मुहब्बत

इंतेहाई सख़्त जुर्म है। फिर अल्लाह तआ़ला ने सूरए अल–इमरान–रू.3 में इरशाद फ़रमाया कि, तर्जुमा : ''मुसलमान, काफ़िर को दोस्त ना बनालें। मुसलमानों के सिवा और जो ऐसा करेगा, उसे अल्लाह से कुछ इलाक़ा ना रहा।'' अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को किसी काफ़िर के कुफ़्र में (खुले कुफ़्फ़ार और कलमा पढ़ने के बाद मुसलमान कहलाने वाले मुर्तदीन दोनों शामिल हैं) फिर बद दीनों से दोस्ती और मुहब्बत क्या मानी रखती है? इसको अशरफ़िया मुबारकपूर के बाअ़ज़ उलमा ख़ासतौर पर अख़तर नदवी और ऐवाने बाला का साबिक़ मेम्बर ने नज़र अंदाज़ करके खुली हुई सुलह कुल्लियत इख़्तेयार की। ना सिर्फ़ सुलह कुल्लियत इख़्तेयार की, बल्कि जो मुख़लिस एहबाब और उलमाए सुलह कुल्लियत से नफ़रत करते हैं, उनका मज़ाक उड़ाया। अल्लाह तआ़ला ने इसी सूरए अल–इमरान–रू.12 में इरशाद फ़रमाया, तर्जमा : ''ऐ ईमान वालो! ग़ैरों को (यानी खुले कुफ़्फ़ार और मुर्तदों को) अपना राज़दार ना बनाओ, वो तुम्हारी बुराई में कमी नहीं करते। उनकी आरजू़ है, जितनी ईज़ा तुम्हें पहुंचे, बैर उनकी बातों से झलक उठा, वो जो सीनों में छुपाए हैं, बड़ा है। हमने निशानियां तुम्हें खोल कर सुनादीं, अगर तुम्हें अ़क्ल हो।''

इन सुलह कुल्लियों को इस आयत में मुनाफ़िक़ कहा गया है। सुलह कुल्लियों की सिफ़त बिल्कुल मुनाफ़िक़ों से मिलती है। इस वजह से इस्लाम और मुसलमानों को अपने फ़रेब से और इत्तेहाद के नारे से वो सख़्त ईज़ाएं पहुंचाते हैं कि एक खुला हुआ मुश्रिक भी ईज़ा नहीं पहुंचा सकता। खुला हुआ मुश्रिक जान का दुशमन होता है और यह ईमान को निकाल लेते हैं। फिर सूरए माएदा–रू.8 में अल्लाह ﷻ इरशाद फ़रमाता है, तर्जुमा : ''ऐ ईमान वाला! यहूद व नसारा को दोस्त ना बनाओ। वो आपस में एक दूसरे के दोस्त हैं और तुम जो कोई उनसे दोस्ती रखेगा तो वो उन्हीं में से है।'' इस आयते करीमा में अल्लाह ﷻ ने खुले हुए कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन, यहूद व नसारा को अपना दोस्त और राज़दार बनाने से मना फ़रमाया। लेकिन यह सुलह कुल्लि उन्हीं को अपना दोस्त और राज़दार क़रार देते हैं। अगर किसी मुसलमान कहलाने वाले ने ऐसा किया तो, वो उन्हीं में से होगा। फिर अल्लाह ﷻ सूरए तौबा–रू.3 में इरशाद फ़रता है, तर्जुमा : ''ऐ ईमान वालो! अपने बाप और भाईयों को दोस्त ना समझो। अगर वो ईमान पर कुफ़्र को पसंद करें और तुम में जो कोई उनसे दोस्ती करेगा तो वही ज़ालिमों में से है।'' फिर अल्लाह ﷻ ने सूरए माएदा–रू.9 में इरशाद फ़रमाता है, तर्जुमा : ''ऐ ईमान वालो! जिन्होंने तुम्हारे दीन को हंसी खेल बना लिया है और जो तुम पहले किताब दिए गए और काफ़िरान में से किसी को अपना दोस्त ना बनाओ।'' मज़कूरा आयाते मुक़द्दसा के सुनने और समझने के बाद कौन सुलह कुल्लि, कि जो खुले हुए कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन और बद दीन व मुलहिदों से अपनी दास्ती बनाए रखना चाहेगा।

www.sunniawaz.com email : mail@sunniawaz.com

मौलाना ततहीर बरेलवी की वहाबियत नवाज़ किताबों का रद

अज़ : मुफ़्ती अ़ब्दुर्रहमान साहब क़िबला

बा ऐतेबार ज़रूरते क़लम का इस्तेमाल :

हमारे अस्लाफ़ का तौर व तरीक़ा रहा है कि, जिस वक़्त और जिस दौर में इस्लाम या इस्लाम के जिस रूक्न पर हमला हुआ है तो उन्होंने इसकी हिफ़ाज़त के लिए अपनी पूरी कूव्वत सर्फ़ की है। ख़्वाह वो ज़ाते इलाही का तक़द्दुस हो या सरकार ﷺ की अज़्मत व रिफ़अ़त हो। मस्लन ईमामे रब्बानी मुजद्दिदे अल्फ़े सानी के दौर में जब दीने अकबरी ने सिर उठाया और ख़ुदावन्दे कुद्दूस की वहदानियत पर हमला हुआ तो सरकार मुजद्दिदे अल्फ़े सानी का क़लम अकसर उसी पर चलता रहा और अकसर उसी मज़्मून पर किताबें आती रहीं। हत्ता कि बातिल परस्तों को कैफ़रे किरदार तक पहुंचा दिया और आ़ला हज़रत सरकार का ज़माना आया तो सरकार ﷺ की अ़ज़्मत पर हमला हुआ। देवबंदीयत, वहाबियत जैसे बहुत सारे फ़ितनों ने सिर उठाया तो आ़ला हज़रत सरकार रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो का क़लम अकसर अज़्मते रिसालत की हिफ़ाज़त और गुस्ताख़ाने मुस्तफ़ा ﷺ की तरदीद व अहानत में चलता रहा। बताना यह है कि, जब जिस पर हमला हुआ है तो हमारे बुजुर्गों ने उसी की तरफ़ ख़ुसूसी तवज्जा फ़रमाई और बिलख़ुसूस अल्लाह ﷻ व रसूल ﷺ की ज़ात तो असल उल उसूल है। अल्लाह ﷻ का तक़द्दुस और अ़ज़्मते मुस्तफ़ा ﷺ की हिफ़ाज़त असल ईमान है। इस पंद्राहवीं सदी में जब कि हर तरफ़ से अ़ज़्मते रिसालत और मरासिले अहले सुन्नत पर हमले हो रहे हैं तो इस दौर में उलमाए अहले सुन्नत पर लाज़िम है कि फ़िरक़ए बातिला बिलख़ुसूस वहाबियों, देवबंदियों का रद व अबताल करें। जैसा कि फ़तावए रज़विया जि. 6, स. 109 पर है कि, ''बिला शुबह उलमाए अहले सुन्नत पर एआ़नते (मदद) सुन्नत व अहानते (तौहीन) बिदअ़त तहरीरन व तक़रीरन बक़द्रे क़ुदरत फ़र्ज़े आ़ज़म व अहम है और रद्दे फ़िरक़ाए बातिला को अहम मक़्सद समझें।'' जैसा कि शेरबशए अहले सुन्नत ने फ़तावए हशमतिया में लिखा है कि, ''सलफ़न व ख़लफ़न हर क़र्न (ज़माना) व तबक़ा में सहाबा व ताबईन से लेकर 1311 हि. तक के उलमा का यही दाब और तरीक़ा रहा है कि हमेशा उलमाए अहले सुन्नत ने बदमज़हबों और बद मज़हबी की रद व तफ़ज़ीह (बदनामी) को अहम मक़्सद समझा।'' इस के अ़लावा हयाते आ़ला हज़रत स. 282 पर है कि, मलेकुल उलमा ने एक रिसाला लिखा और उसको आ़ला हज़रत की बारगाह में पेश किया। आ़ला हज़रत ने उसे देखा और बहुत ख़ुश हुए और फ़रमाया, ''जज़ाकल्लाह ख़ैरन फ़िद्दारैन।'' साथ ही फ़रमाया, ''काश

यह क़ूव्वते दफ़ा ख़बासाते जहन्नमी ज़ेवर में सर्फ़ होती कि इससे क़ौम गुमराह हो रही है।'' ग़ौर से देखें आ़ला हज़रत के इस जुमले को, इससे ख़ूब रौशन हो गया कि दिगर मज़ामीन पर क़लम चलाने से ज़्यादा अहम फ़िरक़ाए बातिला के उन हर्बों को नाकाम करना है जिससे क़ौम गुमराह हो रही है और रद्दे वहाबिया में अपनी ज़्यादा से ज़्यादा क़ूव्वत सर्फ़ करना है। मगर वाह रे वक़्त की सितम ज़रीफ़ी लोग ! सुन्नी बरेलवी भी कहते हैं, और रद्दे वहाबिया में अपनी क़ूव्वत सर्फ़ करने के बजाए सारी क़ूव्वत मरासिले अहले सुन्नत के बन्द करने व करवाने में सर्फ़ करते हैं। उन्हीं में से एक मौलवी ततहीर अहमद टांडवी हैं।

कौन मौलाना ततहीर अहमद ? :

जिनका ख़्याल यह है कि, ''आज दीन का जो भी काम हो रहा है, वो सिर्फ़ मेरी तक़रीरों और तहरीरों से हो रहा है। बाक़ी सारे उलमा बेकार, सारे ख़ुतबा बेकार, सारे पीराने अ़ज़ाम बेकार हैं और सब बद अ़मल हैं।'' अब मैं आपके सामने उनके ख़्यालात को और उनके इक़्तेबासात को भी, जहां उन्होंने मरासिले अहले सुन्नत को बन्द करवाने की कोशिश की है, यके बाद दिगरे पेश करता हूं।

मस्लके आ़ला हज़रत व बरेलवियत पर हमला :

मौलाना ततहीर अहमद साहब अपनी किताब ''दर्मियाने उम्मत'' के स. 122 पर लिखते हैं कि, ''आज कल अहले सुन्नत वल जमाअ़त को एक अलग गिरोह और बरेलवी फ़िरक़े के नाम से नामज़द करने की कोशिश की जा रही है और हमें बजाए मुसलमान और सुन्नी के बरेलवी क़रार दे कर छांटने का मंसूबा चल रहा है और हम हैं कि ख़ुद ही अपने ऊपर से मुसलमान और सुन्नी का लक़ब हटाने में लगे हैं और ख़ुद को बरेलवी कहते हैं। हालांकि अहले सुन्नत ही मुसलमान हैं और यक़ीनन आ़ला हज़रत मौलाना अहमद रज़ा ख़ान की तालीमात ऐन इस्लाम हैं। लेहाज़ा हमें चाहिए कि ख़ुद को मुसलमान ही कहें और जहां ज़रूरत हो, वहां सुन्नी कहें। ख़ुद को बरेलवी कहना हमारा काम नहीं। बदमज़हब लोग हमें बरेलवी कहते हैं और जब हमारा मज़हब इस्लाम है तो हमारी तंज़ीमों, इदारों और मकतबों का तआ़रूफ़ भी इस्लामी नाम से होना चाहिए। जलसों और जुलूसों वग़ैरह में नारे लगाने में भी इस बात का ख़्याल रखना चाहिए कि सीधे–सीधे एक दम मस्लके आ़ला हज़रत ज़िन्दाबाद का नारा लगाने के बजाए पहले इस्लाम ज़िन्दाबाद, अहले सुन्नत ज़िन्दाबाद, उसके बाद जहां ज़रूरत व मस्लहत समझें तो मस्लके आ़ला हज़रत या तालीमाते आ़ला हज़रत ज़िन्दाबाद का नारा लगाएं।''

गुज़ारिशे क़ादरी :

मौलाना ने लिखा कि, ''ख़ुद को बरेलवी कहना हमारा काम नहीं।'' इस पर गुज़ारिश यह है कि मौलाना की जिस किताब का इक़्तेबास हमने ऊपर नक़्ल कया है, इस किताब के ऊपर लिखा है, ''मुसन्निफ़ मौलाना ततहीर रज़ा रज़वी बरेलवी'' और मौलाना की दो–तीन किताबें और नज़र से गुज़रीं, सब में

उन्होंने अपने आपको बरेलवी लिखा है। तो अब मौलाना से गुज़ारिश है कि, पहले आप अपनी ख़बर लें। जितनी जगहों पर ''बरेलवी'' लिखा है, सब को काट दें कि बक़ौल आपके ''बरेलवी कहना हमारा काम नहीं।'' और यह बद यही है कि, जिस बात का हुक्म आप अ़व्वाम को दे रहे हैं कि, ''बरेलवी कहना हमारा काम नहीं, इसलिए बरेलवी ना कहो।'' इसको आप अच्छा समझ रहे होंगे (अगरचे वो फ़िल वाक़िया सही नहीं है, तामीर नहीं तख़रीब (ख़राब) है, भलाई नहीं तबाही है) तो जिस सही और अच्छे काम का हुक्म आप अ़व्वाम को दे रहे हैं, क्या सिर्फ़ अव्वाम के लिए है या आपके लिए भी? आप तो अपनी हर किताब में बरेलवी लिखते हैं और अ़व्वाम को मना करते हैं। क्या आप इस आयते करीमा के मिस्दाक़ (तसदीक़ करने वाला) हुए या नहीं? देखो कुरआन फ़रमाता है तर्जुमा : ''तुम लोगों को भलाई का हुक्म देते हो और अपने आपको भूल जाते हो'', हालांकि जिसको आप सही समझ रहे हैं वो क़तई सही नहीं है। इस लिए कि सारे उलमा ने ''मस्लके आ़ला हज़रत'' का मदलूल (दलील देना) तो मदलूल, मफ़्हूम तो मफ़्हूम है बल्कि जुमले की भी हिफ़ाज़त की है और अपने आपको ''बरेलवी'' कहने पर फ़ख़्र महसूस किया है। मगर आप हैं कि बहुत सारे उलमा के मुत्तफ़िक़ा फ़ैस्ले की मुख़ालिफ़त कर रहे हैं। मुझे लगता है, कहीं आप अपने को मुजतहिद या मुजद्दिद तो नहीं तसव्वुर करने लगे? बज़अ़मे ख़ईश (अपने गुमान) आप कुछ भी तसव्वुर करलें इसलिए कि तसव्वुर हर शए से मुतअ़ल्लिक़ होता है। मुल्ला हसन में लिखा है, तर्जुमा : ''तसव्वुर हर चीज़ से मुतअ़ल्लिक़ होता है।'' मगर हक़ यह है कि, जिन उलमा ने मस्लके आ़ला हज़रत के जुमले की हिफ़ाज़त की है और बरेलवी कहने पर फ़ख़्र महसूस किया है, उनके इल्म व फ़ज़्ल के सामने आप तिफ़्ले मकतब (मकतब में पढ़ने वाले बच्चे) की भी हैसियत नहीं रखते।

1) देखिए मदनी मियां साहब क्या लिखते हैं, देखिए ''आईनए सुलह कुल्लीयत'' स. 21,22 पर ''वो मुक़द्दस हिदायते याफ़्ता जमाअ़त हुज़ूर ने ما انا علیه واصحابی कह कर जिसकी पहचान कराई थी और یدالله علی الجماعة कह कर जिस का तआ़रूफ़ कराया था, उसी जमाअ़त को हिन्द व पाक के एक बड़े हिस्से में ''बरेलवी'' कहा जाता है। अब बरेलवी होने के लिए फ़ाज़िले बरेलवी की ज़ाते गिरामी तक किसी का सिलसिलए इल्मी या नस्बी या बैत व इरादत का पहुंचना या बरेलवी में मुक़ीम रहना ज़रूरी नहीं रह गया। अब इस दुनिया का हर वो फ़र्द बरेलवी है, जो मस्लके अहले सुन्नत पर वाक़ई तौर पर गामज़न है।'' अब मैं 'अलहम्दुलिल्लाह' मस्लकन हनफ़ी, निस्बतन जीलानी, मुशरबन अशरफ़ी और वतनन कछौछवी होने के बावजूद अपने को बरेलवी कहते हुए फ़ख़्र महसूस करता हूं। मौलाना ततहीर साहब फ़रमाईए, अब तो आपकी समझ में आगया होगा कि, बरेलवी कहना हमारा काम है या नहीं? इल्मी और अ़म्ली मैदान में अ़ल्लामा

मदनी मियां साहब के सामने आपकी हक़ीक़त क्या है, इसको भी आप जानते होंगे।

2) दूसरी बात यह है कि, हो सकता है कि आप जवाब दें कि, ''हम धूनरह, ज़ि. बरेलवी के रहने वाले हैं। इस लिए अपने आपको बरेलवी लिखते हैं।'' तो हम कहेंगे, धूनरह, ज़ि. बरेलवी में मुक़ीम क्या होगए कि अहमियत इतनी हो गई कि 'दर्मियानी उम्मत' में बरेलवी लिखो। 'ज़िक्रे ख़ुदा और ईमाम अहमद रज़ा' में बरेलवी लिखो। 'ईमाम और मुक़्तदी' में अपने आपको बरेलवी लिखो। तो क्या आपको नहीं मालूम है कि, सारे सुन्नियों का रूहानी व ईमानी तअ़ल्लुक़ आ़ला हज़रत फ़ाज़िले बरेलवी से है और आ़ला हज़रत की वजह से शहरे बरेलवी से है। आप से एक सवाल यह है कि, ''बताईए कि जिस्म का तअ़ल्लुक़ ज़्यादा मज़बूत होता है या रूह का? अगर जिस्म के तअ़ल्लुक़ की वजह से वो भी ख़ास बरेलवी से नहीं बल्कि ज़ि. बरेली से होने की वजह से आप अपने आपको हर जगह बरेलवी लिख सकते हैं, तो सारे सुन्नी मुसलमान रूहानी और ईमानी तअ़ल्लुक़ की वजह से अपने आपको बरेलवी क्यों नहीं लिख सकते हैं?''

अब मौलाना का दूसरा जुमला देखिए :

''ख़ुद को बरेलवी कहते हैं, हालांकि अहले सुन्नत ही मुसलमान हैं।'' क़ारेईन से गुज़ारिश है कि, ग़ौर से देखें मौलाना के जुमले को और लिल्लाह इंसाफ़ करें। क्या इससे मुतरश्शह नहीं होता है कि बरेलवियत अहले सुन्नत से अलग है। हालांकि हमने मुकम्मिल शरह कर दी है कि जो बरेलवियत है वहीं अहले सुन्नत है। तो फिर इस बात के कहने का क्या मतलब है कि, ''लोग ख़ुद को बरेलवी कहते हैं, हालांकि अहले सुन्नत ही मुसलमान हैं।''

हालांकि मौलाना अगर यह कहते कि, ''बरेलवी ही मुसलमान हैं'' तो बात सही होती। इस लिए कि हम देखते हैं कि, बहुत सारे अपने आपको अहले सुन्नत कहते हैं, मगर मुसलमान नहीं है। मस्लन देवबंदी यह भी अपने आपको अहले सुन्नत कहते हैं तो क्या मौलाना उनको भी मुसलमान कहेंगे? हो सकता है मौलाना जवाब दें कि, ''हम ने देवबंदी को नहीं उसे मुसलमान कहा है जो सही मानों में अहले सुन्नत है और देवबंदी सिर्फ़ कहता है। हक़ीक़त में अहले सुन्नत है नहीं'' तो हम कहेंगे कि, हक़ीक़त में अहले सुन्नत है कौन? तो मजबूर हो कर यह जवाब देना पड़ेगा कि, ''बरेलवी है'' और जब यह बात साबित हो गई कि, हक़ीक़त में अहले सुन्नत बरेलवी ही है तो क़ारेईन फ़ैस्ला करें कि, यह कहना ज़्यादा सही होगा कि अहले सुन्नत ही मुसलमान हैं। या यह कहना ज़्यादा सही होगा कि, बरेलवी ही मुसलमान हैं?

मुहम्मदी बनो :

मौलाना! आपने फ़तावए फ़ैज़ुर्रसूल का हवाला कई जगहों पर दिया है। एक हवाला हम से भी ले लेजिए। देखिए फ़तावए फ़ैज़ुर्रसूल–जि.1, स.73, एक मौलवी ने तक़रीर में ऐलान किया कि, ''तुम ना बरेलवी बनो, ना वहाबी, ना देवबंदी और ना चौधवीं

सदी के मौलवियों का कहना मानो। सिर्फ़ मुहम्मदी बनो।'' इस जुमले को ले कर अ़व्वाम ने सवाल किया कि, ''हमारे समझ में नहीं आता कि, हम क्या करें और बरेलवी व मुहम्मदी में क्या फ़र्क़ है?''

अ़ल्लामा बद्रे मिल्लत का जवाब :

अब अ़ल्लामा का जवाब सुनिए, ''बरेलवी के फ़ाज़िले अफ़ज़ल हुज़ूर आ़ला हज़रत क़िबला मौलाना मुहम्मद अहमद रज़ा ख़ान साहब रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो का दीन व मज़हब जो उन की किताबों से ज़ाहिर है, वो वही है जो ख़ालिस दीने मुहम्मदी है, जो बरेलवी बनने से रोकता है जो मुहम्मदी बनने से रोकता है। वो भी बहुक्मे शरिअ़ते मुत्तेहरा इंदल फ़ुक़हा काफ़िर है।'' मौलाना! हम आपसे पूछते हैं कि, ''बरेलवी बनना सही है या ग़लत? अगर आप सही कहते हैं तो हम कहेंगे, जब बरेलवी बनना सही है तो कहना क्यों सहीं नहीं है? फिर आप यह क्यों कहते हैं कि, बरेलवी कहना हमारा काम नहीं, जब मुसलमान बनना सही है, सही ही नहीं बल्कि लाज़िम व ज़रूरी है, तो कहना क्यों सही नहीं? और अगर आप कहते हैं कि, बरेलवी बनना ग़लत है यानी बरेलवी ना बनो तो हमारी गुज़ारिश है कि अ़ल्लामा बद्रे मिल्लत का फ़तवा फिर से ग़ौर से पढ़ लें और देखें कि आप किस शुमार में आते हैं और आपके ऊपर इंदल फ़ुक़हा क्या हुक्म लगता है?''

फ़ैसला :

ख़्याल रहे कि, हमने सिर्फ़ सवाल कि शक़ क़ायम करने के लिए आपसे इस तरह का सवाल किया कि, ''बरेलवी बनना सही है या ग़लत?'' वरना सच्चाई और हक़ीक़त तो यह है कि, बरेलवी बनना सिर्फ़ सही ही नहीं बल्कि लाज़िम व ज़रूरी है। इस लिए कि माक़ब्ल आपने अ़ल्लामा का फ़तवा पढ़ा कि, ''**बरेलवी बनने से रोकने वाला इंदल फ़ुक़हा काफ़िर है।**'' ग़ौर कीजिएगा, एक होता है बरेलवी ना बनना और एक है बरेलवी बनने से रोकना। तो जब बरेलवी बनने से रोकने वाले को अ़ल्लामा ने इंदल फ़ुक़हा काफ़िर लिखा है तो जो बरेलवी ही ना हो वो इंदल फ़ुक़हा क्या होगा? आप ख़ुद समझ लें। इस लिए बरेलवी होना ज़रूरी है और जब हम बरेलवी हो गए तो कहने में क्या दिक़्क़त है? जब डॉक्टर हो गए तो कहने में क्या दिक़्क़त है? जब इंजिनियर हो गए तो कहने में क्या दिक़्क़त है?

मौलाना ततहीर गुमराही के रास्ते पर :

मौलाना ततहीर ने अपनी किताब ''ज़िक्रे ख़ुदा और ईमाम अहमद रज़ा'' में जगह जगह लिखा है कि, ''**फ़ातेहा सूव्वम चहलम वग़ैरह यह सिर्फ़ जाईज़ हैं, लोग ना करें। तब भी कोई गुनाह नहीं।**'' कहीं लिखते हैं कि, ''**लोगों ने फ़ातेहा, तीजा, चालीसवें को यानी जितने मरासिले अहले सुन्नत हैं, उनमें से अकसर को गिनाने के बाद यह कहते हैं कि, अ़व्वाम ने इस को फ़र्ज़ व वाजिब समझ लिया है और दरगाहों के चक्कर लगाने ही को इस्लाम समझने लगे हैं। जबकि यह सिर्फ़ जाईज़ व मुस्तहिब हैं।**

शरअ़न फ़र्ज़ व ज़रूरी नहीं। ना करें तब भी कोई गुनाह नहीं।''

अब इस के जवाब के लिए मैं हुज़ूर सदरूल अफ़ाज़िल की किताब फ़तावए सदरूल अफ़ाज़िल–स. 582, से एक इस्तफ़ता और उसका जवाब नक़्ल कर रहा हूं। इसको पढ़ कर आप ख़ुद फ़ैस्ला करें कि, मौलवी ततहीर गुमराही के रास्ते पर हैं या नहीं?

इस्तफ़ता :

क्या फ़रमाते हैं उलमाए दीन व मुफ़्तीयाने शरअ़ मतीन कि, ''फ़ातेहा, सूव्वम और चहलम वग़ैरह जो मद तिहाए दराज़ (एक ज़माने से) से बिला नकीर मुसलमानों में जारी है। जब तक कि वहाबिया का फ़ितना ना उठा, किसी ने इस का इंकार ना किया। इस लिए यह उमूर वहाबियों की अ़लामत और शुअ़ार (तरीक़ा) ठहरे। अब जो लोग इन कामों को बंद करना चाहते हैं, उनकी निस्बत का क्या हुक्म है? आया मुसलमानों में तश्दुद (सख़्ती) व तफ़रीक़ (जूदा करना) के मुरत्तकब हैं या नहीं? और वहाबियत के मूमीद (मदद करने वाला) व मआ़विन (साथी) ठहरेंगे या नहीं? और वहाबियों की इमदाद व अआ़नत (मदद) अगरचे बिल क़सद हो तो इस का क्या हुक्म है?'' अब जवाब देखिए :

अल-जवाब :

"फ़तेहा सूव्वम, चहलम वग़ैरह उमूरे ख़ैर जिस में अमवात (मरहूमीन) को ईसाले सवाब किया जाता है, उनका इस्तहबाब व इस्तहसान (अच्छा जानना) दलाईले शरिआ़ से साबित है"। मौलवी ततहीर अब इसके आगे का जुमला देखो और अपने बारे में फ़ैस्ला करो कि, गुमराह हो या नहीं? हुज़ूर सदरूल अफ़ाज़िल लिखते हैं कि, ''**इन उमूरे ख़ैर का इंकार और इस पर तशद्दुद उस क़ौम का यानी वहाबियों का वज़ीफ़ा बन गया है। इस लिए इन कामों के बंद करवाने की तहरीक ख़्वाह वो किसी हीले या बहाने से हो। यक़ीनन वहाबियत की अ़लामत है।"** मौलवी ततहीर अब तो ख़ुद सोचलें कि, आपके अंदर वहाबियत की अ़लामत पाई गई या नही? आप भी मरासिले अहले सुन्नत के बंद करवाने के लिए बहुत परेशान हैं। आप नमाज़ का बहाना ले कर बंद करवाना चाहते हैं। ग़ौर से देखो अ़ल्लामा के जुमले को कि ख़्वाह किसी भी हीले या बहाने से हो, अ़लामते वहाबियत है।

अब मैं पूछता हूं कि, ''आख़िर नमाज़ ना पढ़ने का, दरगाहों और तीजा, चालीसवां वग़ैरह से क्या तअ़ल्लुक़ है? अगर कोई नमाज़ का पाबंद नहीं है तो इसका मतलब क्या है? कि दरगाहें और तीजे, चालीसवें इस के ज़िम्मेदार हैं? क्या दरगाहों में यही सबक़ दिया जाता है? मआ़ज़्ज़ल्लाह! कि नमाज़ ना पढ़ो।'' मेरा जुमला ख़त्म हुआ और फिर अ़ल्लामा का फ़तवा पढ़िए, आगे लिखते हैं कि, ''**और यक़ीनन ऐसी तहरीक फ़ितना परदाज़ी है**।'' अब वहाबियों ने यह भी तरीक़ा इख़्तेयार किया है कि, वो किफ़ायत शआ़री के तालीम के पर्दे में इन उमूर के बंद करने की कोशिश करते हैं। अब अ़ल्लामा की नसीहत सुनो, ''**मुसलमानों को ऐसी चालों से आगाह रहना**

चाहिए और ऐसे बदमज़हबों के मक्र व कैद से अपने आपको और अपनी क़ौम के नादान लोगों को बचाना चाहिए। इन उमूर का इंकार और इनकी बंदिश की कोशिशे वहाबित की तरवीज (रिवाज) और इसकी खुली अआ़नत (मदाद) है। इसमें बिला क़सद वो इरादे का एहतेमाल (गुमान) महज़ लूगू (बेकार) है।'' मौलवी ततहीर ग़ौर से देखें इस जुमले को, यह आपकी उसी चाल का जवाब है जो आपने ज़िक्रे ख़ुदा और ईमाम अहमद रज़ा के स. 48 पर लिखा कि, ''मेरा मक़्सद किसी बातिल फ़िरक़े की मआ़ज़्ज़ल्लाह! ताईद करना नहीं है।'' आपका मक़्सद और इरादा कुछ भी हो, मगर आपकी तहरीरों से खुली हिमायत साबित है और क़सद व इरादे का एहतेमाल महज़ लगू है और जैसे आपने मुसलमानों पर इलज़ाम लगाया कि, ''सब तीजा, चालीसवें को ज़रूरी समझते हैं।'' बिल्कुल इसी तरह वहाबिया मुसलमानों पर यह इलज़ाम लगाते हैं कि, ''**तीजा, चालीसवें वग़ैरह में यह लोग उसी तअ़य्युन को वाजिब और ज़रूरी समझते हैं।**'' इसके जवाब में अ़ल्लामा लिखते हैं कि, ''**यह कहना कि मुसलमान उसी तअ़य्युन को वाजिब समझते हैं, यह मुसलमानों पर इफ़्तेरा (झूट) है।**'' अब मैं कहता हूं मौलवी ततहीर से कि, ''जैसे वहाबियों ने मुसलमानों पर इफ़्तेरा किया, ऐसे ही आप भी मुसलमानो पर इफ़्तेरा करते हैं। अब तो आप ही बताईए कि, आपकी बोली और वहाबियों की बोली में क्या फ़र्क़ है? उन्होंने तअ़य्युने अय्याम को लेकर इफ़्तेरा किया और आपने असल शए ही को लेकर इफ़्तेरा कर दिया।''

आ़ला हज़रत का फ़तवा और मौलाना ततहीरः

मौलाना ततहीर अपनी किताब के स.46 पर लिखते हैं कि, ''**तजुर्बा भी ऐसा ही हुआ। यह हाल मैंने उन्हीं लोगों का देखा है कि, जिसको आख़ेरत, क़ियामत, दोज़ख़ व जन्नत से कोई सरोकार नहीं। पीरी मुरीदी को गिरोहबंदी और दुनियादारी और एक धंदा बना रखा है। आख़ेरत उनकी फ़िक्र से दूर है। उन्हें यह ध्यान ही नहीं है कि हमें मरना है, ख़ुदा को मूंह दिखाना है। जो ख़ुदा का ज़िक्र कराने चले थे, वो ख़ुद अपनी ही मंक़बतें और तारीफ़ें सुनने में लग गए। जो यादे इलाही और ज़िक्रे मुस्तफ़ा ﷺ की लज़्ज़त हासिल करने निकले थे, वो पीरों में उलझ कर रह गए। तसव्वुफ़ और तरीक़त के मुबारक सिलसिलों को गिरोहबंदी बना डाला। दीनदार तो ना रहे लेकिन दीन के ठेकेदार बहुत होगए। ख़ुदा वाले तो चले गए और ख़ुदा को भुला कर अपनी पूजा पाठ और परस्तिश में लगाने वाले कीड़े मकोड़ों की तरह फ़ैल गए।**'' (मआ़ज़्ज़ल्लाह)

आपने आंजनाब के जले कटे जुमलों को तो सुन ही लिया। मुझे इस में कुछ समझाने की ज़रूरत तो नहीं है। फिर भी कुछ बातों की तरफ़ तवज्जोह दिला देता हूं।

नं. 1) कोई अपने पीर की तारीफ़ करे तो मुजरिम है।

नं. 2) जितने पीर हैं, सब ख़ुदा को भूल कर अपनी तारीफ़ों में लग गए।
नं. 3) अ़व्वाम, पीरों में उलझ गए।
नं. 4) अपने पीर की ताज़ीम करो तो उनके नज़दीक परस्तिश और पूजा पाठ है।

पीर का हक़ क्या है? फ़तावए रज़विया की रौशनी में :

अब पीर के हुक़ूक़ के तअ़ल्लुक़ से फ़तावए रज़विया–जि.12, स.259,260 पर आ़ला हज़रत सरकार ने जो तहरीर फ़रमाया है, उसमें से कुछ आप के सामने पेश करता हूं।

1) यह ऐतेक़ाद करे कि मेरा मतलब उसी मुर्शिद से हासिल होगा और अगर दूसरी तरफ़ तवज्जोह करेगा तो मुर्शिद के फ़ैज़ से महरूम रहेगा।

2) हर तरह मुर्शिद का मतीअ़ (फ़रमाबरदार) हो और जान व माल से उसकी ख़िदमत करे क्योंकि बग़ैर मुहब्बते पीर कुछ नहीं होता।

3) मुर्शिद, जो वज़ीफ़ा बताए, उसको पढ़े और तमाम वज़ीफ़े छोड़ दे, ख़्वाह उसने अपनी तरफ़ से पढ़ना शुरू किया हो या किसी ने बताया हो।

4) मुर्शिद की मौजूदगी में हमातन उसी के तरफ़ मुतवज्जोह रहना चाहिए। यहां तक कि सिवाए फ़र्ज़ व सुन्नत के नमाज़े नफ़िल और कोई वज़ीफ़ा उसकी इजाज़त के बग़ैर ना पढ़े।

5) हत्तलइमकान ऐसी जगह ना खड़ा हो कि, उसका साया मुर्शिद के साए या उसके कपड़े पर पड़े।

6) मुर्शिद के बरतनों को इस्तेमाल में ना लाए।

7) जिस जगह मुर्शिद बैठता हो, उस तरफ़ पैर ना फैलाए, अगरचे सामने ना हो।

इस मक़ाम पर आ़ला हज़रत सरकार ने पच्चीस हुक़ूक़ गिनाए हैं, जिनमें से हमने सिर्फ़ सात लिया है। अब मैं चाहता हूं कि उसी जिल्द के स. 152 पर जो हुक़ूक़ आ़ला हज़रत सरकार ने बताए हैं, उनमें से भी कुछ बयान कर दिया जाए।

1) मुर्शिद के बग़ैर इजाज़त बात करना मना है।

2) उसकी मजलिस में दूसरे की तरफ़ मुतवज्जोह होना मना है।

3) उसकी औलाद की ताज़ीम फ़र्ज़ है, अगरचे बेजा हाल पर हो।

4) उसके कपड़ों की ताज़ीम फ़र्ज़ है।

5) उसके बिछौने की ताज़ीम फ़र्ज़ है।

6) उसकी चौखट की ताज़ीम फ़र्ज़ है।

7) अपने जान व माल को उसी का समझे।

अब क़ारेईन से मैं पूछता हूं, ''यह सब जो आ़ला हज़रत सरकान ने पीर के हुक़ूक़ के तअ़ल्लुक़ से बताए हैं, अगर मुरीद करे तो मौलवी ततहीर की ज़बान में वो परस्तिश कर रहा है, पूजा पाठ कर रहा है।'' (मआ़ज़्ज़ल्लाह) आ़ला हज़रत सरकार फ़रमाते हैं कि, ''अपने जान व माल को उसी का समझे और उसकी ख़िदमत करे'' और मौलवी ततहीर कह रहे हैं कि, ''सब पीरों में उलझ कर रह गए।'' अब बताईए कि कौन सही है? मौलाना ततहीर आप उन हुक़ूक़ और आदाब

व ताज़ीम को जो आ़ला हज़रत सरकार ने बताया है। परस्तिश और पूजा पाठ कहते हैं। आप सिर्फ़ इतना बता दो कि इबादत और ताज़ीम में कौन सी निस्बत है? आप क्या बताएंगे, हमसे सुनें : ''इबादत ग़ायते तज़ल्लुल को कहते हैं और इसके लिए आ़बिद का माबूद की निस्बतुल अलूहिय्यत (अल्लाह का रब) का ऐतेक़ाद रखना और मुतसर्रिफ़ बिलज़ात जानना ज़रूरी है और ताज़ीम इससे आ़म है।'' जनाब आपने ताज़ीम को इबादत कह दिया। दोनों में उमूमे ख़ुसूसे मुतलक़ की निस्बत है। देखिए फ़तावए सदरूल अफ़ाज़िल–स.101। अब आपको मेरा यह मशवरा है कि, जब मालूम ना होतो अनट शनट हुक्म ना लगाया करें।

दूसरी बात यह है कि, जो ग़ैरे ख़ुदा की परस्तिश और पूजा की इजाज़त दे, वो काफ़िर है और जो ग़ैरे ख़ुदा की परस्तिश करे, वो भी काफ़िर है। यह देखिए फ़तावए अमजदिया–जि.4, स.406 पर है कि, ''**जिसने ग़ैरे ख़ुदा की परस्तिश की या कराई या उस पर राज़ी हुआ, काफ़िर है**।'' और मौलाना ततहीर साहब लिखते हैं कि, ''सब ख़ुदा को भुला कर अपनी परस्तिश और पूजा पाठ में लगाने वाले कीड़े मकोड़ों की तरह फैल गए।'' अब फ़तावए अमजदिया की मज़कूरा बाला इबारत देखने के बाद कारेईन ख़ुद फ़ैस्ला कर लें कि, मौलाना ततहीर के बयान के मुताबिक़ पीराने इज़ाम और उनके मुरीदीन काफ़िर हुए या नहीं? (मआ़ज़्ज़ल्लाह) हो सकता है कि, मौलाना इधर उधर की तावील करें कि हमने यह नहीं यह मुराद लिया है, तो गुज़ारिश यह है कि, मौलाना चाहे जितना तावील करलें, बहेरहाल बच नहीं सकते। इसलिए कि यही हैं, जिन्होंने यह लिखा है कि, ''अगर कोई पूछे कि तबीअ़त कैसी है? तो लोग कह देते हैं कि, पीर का करम है।'' यह जाईज़ तो है मगर मुनासिब नहीं। इसकी जगह पर अल्लाह का नाम ले कि, ''अल्लाह का फ़ज़्ल है'' यह बेहतर है। अब मेरी गुज़ारिश यह है कि, वो आदमी जो जाईज़ कह कर बेहतर अ़मल करवा रहा हो, वो बिला तहक़ीक़ मुसलमानों की तरफ़ और पीराने इज़ाम की तरफ़ परस्तिश और पूजा पाठ करने और करवाने की निस्बत कर रहा है, क्या यह सही है? यहां अपना तक़्वा और बेहतर सब भूल गए? यह लीजिए अहिय्याउल उलूम की इबारत, तर्जुमा : ''**किसी मुसलमान की निस्बत गुनाहे कबीरा की तरफ़ बग़ैर तहक़ीक़ के जाईज़ नहीं**।'' और इसी इबारत को ईमाम ग़ज़ाली के हवाले से आ़ला हज़रत सरकार ने भी नक़्ल फ़रमाया है, मुताल्ला फ़रमाईए फ़तावए रज़विया शरीफ़–जि.11, स.63। कारेईन अब फ़ैस्ला करें कि, बग़ैर तहक़ीक़ के गुनाहे कबीरा की निस्बत मुसलमान की तरफ़ करना जाईज़ नहीं है। मगर क्या तक़्वा है कि, मौलाना ततहीर तक़्वा और बेहतर पर अ़मल करने वाले ने शिर्क व कुफ़्र यानी पूजा पाठ की निस्बत मुसलमानों और पीरों की तरफ़ बग़ैर तहक़ीक़ के कर दिया, क्या यह सही है? अब दूसरी दलील मुलाहिज़ा करें :

मैंने क़ब्ल में मौलाना ततहीर का जो इक़्तेबास नक़्ल किया है, उसका एक जुमला यह भी है कि, ''जो ज़िक्रे ख़ुदा ﷻ व रसूल ﷺ कराने चले थे वो अपनी ही तारीफ़ें और मंक़बतें सुनने में लग गए।'' यह मौलाना ततहीर का जुमला है। मैं पूछता हूं, ''क्या मुरीद का अपने पीर की मंक़बत पढ़ना सही नहीं? क्या पीर का अपनी मंक़बत सुनना सही नहीं?''

मुरीद का पढ़ना और पीर का सुनना सहीं है या नहीं? इसके लिए यह लीजिए हयाते आ़ला हज़रत–स.51 पर है कि, ''वअ़ज़, ख़ुश बयान हज़रत अ़ल्लामा अ़ब्दुल अ़लीम साहब मेरठी, हरमैन तैय्यबैन से वापसी पर हुज़ूर आ़ला हज़रत की ख़िदमत में हाज़िर हुए और मुंदर्जाज़ैल मंक़बत निहायत ही ख़ुश आवाज़ी के साथ पढ़ कर सुनाई ....

तुम्हारी शान में जो कुछ कहूं उससे सिवा तुम हो
क़सीमे जाम इरफ़ां ऐ शह अहमद रज़ा तुम हो
ग़रीक़ बहरे उलफ़त मस्त जाम बादए वहदत
मुहिब्बे ख़ास मंजूर हबीबे किबरिया तुम हो
अ़लीम ख़स्ता एक अदना गदा है आस्ताने का
करम फ़रमाने वाले हाल पर उसके शहा तुम हो

जब मौलाना अशआ़र पढ़ चुके तो आ़ला हज़रत सरकार ने इरशाद फ़रमाया कि, ''**मौलाना आपकी ख़िदमत में क्या पेश करूं।**'' बिल आख़िर आ़ला हज़रत सरकान ने एक जुब्बा अ़ता फ़रमाया। बोलिए मौलाना ततहीर साहब, मुरीद मंक़बत पढ़ रहा है और आ़ला हज़रत सरकार अपनी शान में मंक़बत सुन रहे हैं और उस पर नज़राना दे रहे हैं। अब बताईए, आपका क्या होगा? आ़ला हज़रत सरकार और अ़ल्लामा मेरठी आपके रद में आए या नहीं? ''कि जो ख़ुदा ﷻ और रसूल ﷺ का ज़िक्र कराने चले थे, वो अपनी ही मंक़बतें और तारीफ़ें सुनने में लग गए।''

अब्दुल्लाह नाम रख़ा जाएः

मौलाना ततहीर साहब अपनी किताब ''ज़िक्रे ख़ुदा और ईमाम अहमद रज़ा'' के स.123 पर लिखते हैं कि, ''ईमाम अहमद रज़ा से एक इस्तफ़ता किया गया, जिसके अलफ़ाज़ यह हैं, क्या फ़रमाते हैं उलमाए दीन इस मस्अ़ले में, अ़ब्दुल नबी नाम रखना जाईज़ है या नहीं? ईमाम अहमद रज़ा ने जवाब में फ़रमाया कि, अपने आप को अ़ब्दुल नबी कहना जाईज़ है। लेकिन नाम अ़ब्दुल्लाह रखा जाए।'' इस जवाब का ख़ुलासा तहरीर करते हुए लिखते हैं कि, ''इस फ़तवे से कोई यह ना समझ ले कि उन्होंने अ़ब्दुल नबी नाम रखने को जाईज़ क़रार दिया, ऐसा नहीं है।'' यानी मौलाना यह कहना चाहते हैं कि, ''आ़ला हज़रत सरकार के फ़तवे से साफ़ ज़ाहिर है कि, यह नाम रखना जाईज़ है।'' इस पर सवाल होगा कि, ''जब यह भी जाईज़ है तो अ़ब्दुल्लाह नाम रखने का मशवरा क्यों दिया।'' इसके दो जवाब मौलाना ततहीर ने दिया है, मुलाहिज़ा फ़रमाएं :

जवाब १) ताकि हदीस पर अ़मल हो जाए और हदीस में अल्लाह को अ़ब्दुल्लाह और अ़ब्दुर्रहमान सारे नामों में ज़्यादा पसंद है।

जवाब २) ताकि कहीं लोग अम्बिया, औलिया की मुहब्बत में अल्लाह को ना भूल जाएं और जो मक़्सूद है उससे ग़ाफ़िल हो जाएं।

मौलाना के कहने का मक़्सद :

इससे मौलाना यह दर्स देना चाहते हैं कि, ''आप लोग भी अ़ब्दुल नबी की बजाए अ़ब्दुल्लाह या अ़ब्दुर्रहमान नाम रखें।'' अब हम मौलाना के बयान कर्दा दोनों वजहों पर बहस करते हैं।

पहली वजह : ताकि हदीस पर अ़मल हो जाए और हदीस में है कि, ''अल्लाह ने अ़ब्दुल्लाह और अ़ब्दुर्रहमान नामों को ज़्यादा पसंद फ़रमाया है।'' इस पर हमारी गुज़ारिश यह है कि, हदीस पर अ़मल करने का सबक़ सिर्फ़ इसी के लिए था या अपने लिए भी? याद रखिए, आ़ला हज़रत सरकार की वो ज़ात है जो पहले ख़ुद अ़मल करते हैं, फिर दूसरों को सबक़ देते हैं। अब आप बताईए कि, आ़ला हज़रत सरकार ने अपना नाम अ़ब्दुल मुस्तफ़ा क्यों रखा? यह देखिए हयात आ़ला हज़रत–स.2। हुज़ूर मलकुल उलमा तहरीर फ़रमाते हैं कि, ''आ़ला हज़रत सरकार का नाम अ़ब्दुल मुस्तफ़ा अहमद रज़ा है और यह देखिए सवांहे आ़ला हज़रत–स.84 पर। अ़ल्लामा बद्रे मिल्लत तहरीर फ़रमाते हैं कि, ''जिसका नाम अ़ब्दुल मुस्तफ़ा अहमद रज़ा है और उसी पर बस नहीं।'' यह लीजिए पूरी तफ़्सील सुन लीजिए : आपका पैदाईशी नाम 'मुहम्मद' रखा गया और पैदाईशी नाम के बाद इल्मे हिन्दसा के ऐतेबार से आपका तारीख़ी नाम 'अल–मुख़तार' रखा गया। आपके दादा या वालिद ने आपका नाम 'अहमद रज़ा' रखा। इसके बाद आपने ख़ुद अपने नाम के साथ 'अ़ब्दुल मुस्तफ़ा' का इज़ाफ़ा फ़रमाया। फ़रमाईए मौलाना ततहीर साहब, इतने नामों में कहीं अ़ब्दुल्लाह भी दिखाई दे रहा है? आ़ला हज़रत सरकार के वालिद तो ख़ातिमुल मुहक़्क़ेक़ीन थे। आपके दादा और वालिद दोनों बजुर्ग हस्तियां थीं। उन्हीं हज़रात ने अहमद रज़ा नाम रखा। क्या उन हज़रात को हदीसे पाक पर अ़मल करने का वो जज़्बा नहीं था, जो आपको है? उस पर मज़ीद आपने आ़ला हज़रत सरकार के बारे में लिखा कि, उनके सामने यह हदीस थी कि, ''अल्लाह को सारे नामों में अ़ब्दुल्लाह और अ़ब्दुर्रहमान ज़्यादा पसंद है।'' इसलिए अ़ब्दुल्लाह नाम रखने का मशवरा दिया।

अब मेरी सुनिए, वालिद और दादा के अहमद रज़ा नाम रखने के बाद ख़ुद आ़ला हज़रत सरकार ने अपने लिए जिस नाम का इज़ाफ़ा किया, वो अ़ब्दुल मुस्तफ़ा है। अब बताईए आपके पास क्या जवाब होगा। आपकी तशरीह के मुताबिक़ आ़ला हज़रत सरकार को अ़ब्दुल्लाह या अ़ब्दुर्रहमान का इज़ाफ़ा करना चाहिए ना कि अ़ब्दुल मुस्तफ़ा का। आप अपनी तशरीह देखें और आ़ला हज़रत सरकार का फ़ेअ़ल व अ़मल देखें। मवाफ़िक़ हैं या मुख़ालिफ़? और हमारा ऐतेराज़ भी आ़ला हज़रत सरकार पर नहीं। आपकी की हुई तशरीह पर है। वरना तो हम आ़ला हज़रत नहीं बल्कि आ़ला हज़रत सरकार के दर के कुत्ते हैं।

क़ौले फ़ैसल :

यह लीजिए एक ऐसी दलील जिस के बाद चूं चरा की गुंजाईश ही ख़त्म हो जाती

है। हकीमुल उम्मत अ़ल्लामा मुफ़्ती अहमद यार खान अलैहिर्रहमा, जाउलहक़–जि.1, स.354 पर अ़ब्दुल नबी और अ़ब्दुल मुस्तफ़ा नाम रखने पर दलाईल पेश करते हुए तहरीर फ़रमाते हैं कि, ''अगर कोई शख़्स किसी को अपना मरबी या रब कहे तो मुश्रिक ना होगा। हां! इससे बचे तो भी हर्ज नहीं। क्योंकि यह नाम रखना वाजिब नहीं। लेकिन इस ज़माने में देवबंदियों, वहाबियों को चिढ़ाने के लिए यह नाम रखे तो बाअ़से बरकत और बाअ़से सवाब है।'' और आगे लिखते हैं कि, ''हम फ़ातेहा की बहस में इसकी तहक़ीक़ कर चुके हैं कि जिस मुस्तहब काम को आ़दाए दीन रोकने की कोशिश करें, उस को ज़रूर करना चाहिए।'' अब बताईए मौलाना ततहीर साहब, आपके उन अक़वाल का क्या होगा? यह सिर्फ़ मुस्तहब हैं, ना करो तब भी कोई गुनाह नहीं। आपने सुन लिया अ़ल्लामा के जुमले को कि, ''जिस मुस्तहब काम से आ़दाए दीन रोकें, उसको ज़रूर करना चाहिए और वहाबियों को चिढ़ाने के लिए अ़ब्दुल मुस्तफ़ा नाम रखना बाअ़से बरकत व सवाब है।'' क्या उन को ख़्याल नहीं था कि लोग अल्लाह को भूल ना जाएं?

सिर्फ़ एक आप ही दीनदार बचे हैं? अब हम मौलाना की दूसरी वजह पर बहस करते हैं कि, ''अगर कोई अपना नाम अ़ब्दुल नबी के अ़लावा रख ले और अपने आपको ज़िन्दगी भी अ़ब्दुल मुस्तफ़ा लिखता, कहता, समझता रहे तो क्या मक़्सूद हासिल हो जाएगा? आखिर परचार तो अ़ब्दुल मुस्तफ़ा ही का होता रहेगा। अब देखो ख़ुद आ़ला हज़रत सरकार ने क्या किया है। ज़िन्दगी भर अपने आपको अ़ब्दुल मुस्तफ़ा कहते, समझते, लिखते रहे। जैसा कि अ़ल्लामा बद्रे मिल्लत ने सवांहे आ़ला हज़रत के स.365 पर लिखा है कि, ''जो हमेशा अपने को अ़ब्दुल मुस्तफ़ा समझता, कहता और लिखता रहा बक़ौल आपके आ़ला हज़रत सरकार को भी सोचना चाहिए कि यह सिर्फ़ जाईज़ है, फ़र्ज़ व वाजिब तो है नहीं। मेरे अ़ब्दुल मुस्तफ़ा कहने और लिखने से पूरि मिल्लत कहने और लिखने लगेगी और इस तरह लोग अल्लाह को भूल जाएंगे।'' जनाब अ़ब्दुल मुस्तफ़ा कहने से अल्लाह को भूल जाने की जो सोच है, वो सिर्फ़ आपकी है। वरना यह देखिए आ़ला हज़रत सरकार क्या लिखते हैं ....

ख़ौफ़ ना रख रज़ा ज़रा तो तू है अ़ब्दुल मुस्तफ़ा
तेरे लिए ईमान है तेरे लिए ईमान है

जनाब सुनिए! आ़ला हज़रत सरकार अपने आपको इस लिए अ़ब्दुल मुस्तफ़ा लिखते रहे कि अ़ब्दुल मुस्तफ़ा लिखने में वहाबियत की तरदीद है। इस लिए कि वहाबिया इस नाम को शिर्क बताते हैं और वहाबियों की तरदीद फ़र्ज़े आ़ज़म है। मगर हैरत है आप पर कि, आप के नज़दीक तो सब से बड़ा फ़र्ज़ यह है कि उलमा खुल कर बताएं कि, तीजा, चालीस्वां, फ़ातेहा करना ज़रूरी नहीं है। अ़ब्दुल मुस्तफ़ा नाम रखना ज़रूरी नहीं है, इस लिए कि यह सिर्फ़ जाईज़ है, फ़र्ज नहीं।

गुज़ारिशे क़ादरी का मतलब :

मेरे कहने का मक़्सद सिर्फ़ इतना है कि, अ़ब्दुल मुस्तफ़ा नाम रखने से ना तो

अल्लाह का नाम मिटने वाला है और ना ही लोग अल्लाह को भूलेंगे। बल्कि सच्चाई तो यह है कि हक़ीक़त में अल्लाह वाला वही है जो पहले अ़ब्दुल मुस्तफ़ा है वरना अ़ब्दुल शैतान है। इत्मेनान के लिए देखिए हयाते आ़ला हज़रत–स.221 दूसरा इक़्तेबास मौलाना अपनी इसी किताब के स.109 पर लिखते हैं कि, ''ईमाम अहमद रज़ा की तालीमात इस बारे में भी अ़व्वाम के सामने लाना ज़रूरी है। वो फ़रमाते हैं कि, फ़ातेहा व सदक़ात व सूव्वम, चहलम में जो सर्फ़ हुआ या जो क़ब्र को पुख़्ता किया और मसारिफ़ (ख़र्च) क़द्रे सुन्नत से ज़ाईद किए वो जुम्मए पसर (लड़का) पड़ेंगे, बाक़ी विरसा को इससे सरोकार नहीं।'' इसी के बाद सफ़ा.110 पर लिखते हैं कि, ''एक बार आ़ला हज़रत सरकार से पूछा गया, कफ़न, दफ़न आर उनकी फातेहा व उर्स वग़ेरा में कितने रूप्ये ख़र्च किये जाए तो आला हज़रत सरकारने जवाब दिया कि, ''तजहिज़ व तकफिन (कफ़न व दफ़न) में इस क़दर जो आम मुसलमानों के लिए सर्फ़ हो सकता है, फ़ातेहा उर्स के लिए शरआ़ से कोई मुतालेबा नहीं।"

आ़ला हज़रत सरकार कि इन दोनों इबारतो पर हम एक साथ कलाम करते है पहले आप हज़रात मौलान ततहिर का बयान किया हूआ मतलब सूनिए लिखते है "यानी बुज़ुर्गों और आ़म मूसलमानों के कफ़न व दफ़न में ख़र्चे के ऐतेबार से शरअ़न कोई फ़र्क़ नहीं रखा गया है, इसके आगे का जूमला सूनिए और ज़हन व फ़िक्र का अंदाज़ा लगाइए लिख़ते है कि, ''उनकी फ़ातेहा और उर्स वग़ैरह में जो लोग ख़ूब ख़र्च करते हैं उसका शरिअ़ते इस्लामिया में कोई हुक्म नहीं है। वह अपनी ख़ुशी से करते हैं, ना करें तबभी कोई गुनाह नहीं। हुज़ूर ने ना किया ना हुक्म दिया और ना मना किया।

गुज़ारिशे क़ादरी :

मेरी गुज़ारिश सिर्फ़ इतनी है कि, सरकार ने तो मना नहीं किया लेकिन मौलाना ततहीर ने दबे लफ़्ज़ों में और दरे पर्दा मना कर दिया कि, ''ना करें तब भी कोई गुनाह नहीं।'' आख़िर ऐसा भी तो कहा जा सकता था कि, ''ना करें तब भी कोई गुनाह नहीं, लेकिन कर रहे हैं तो अच्छा कर रहे हैं। करने से उन्हें फ़ैज़ मिलता है, फ़ाएदा होता है, सवाब मिलता है।'' मगर यह ऐसा कैसे कह देते, उन्हें तो सब बंद करवाना है। कहीं यह दबी हुई चिंगारी तो नहीं है। मैं पूछता हूं कि, क्या हर काम सिर्फ़ गुनाह से बचने के लिए किया जाता है? नहीं ऐसा क़तअ़न नहीं बल्कि बहुत सारे काम सिर्फ़ इस लिए किए जाते हैं कि उनमें फ़ाएदा है, सवाब है, अच्छा है। हदीस शरीफ़ में आया है, तर्जुमा : ''अ़मलों का दारोमदार नीय्यत पर है।'' तो अब जिसको फ़ाएदा चाहिए, सवाब चाहिए, बुज़ुर्गों का फ़ैज़ चाहिए वो ख़ूब ख़र्च कर रहा है, आपको क्या तकलीफ़ है? अगर आपको ना चाहिए तो आप अलग रहें, अ़व्वाम को इतना ग़लत मशवरा क्यों देते हैं।

पहले इक़्तेबास के तअ़ल्लुक से मौलाना के जुमले :

मौलाना स.110 पर लिखते हैं कि, ''यहां मैं इतना और कहूंगा कि नियाज़, फ़ातेहा या पक्की क़ब्रें बनवाना शरअ़न ज़रूरी नहीं हैं, तो उनके लिए जो चंदा करने का रिवाज हो गया है वो भी सही नहीं है।''

गुज़ारिशे क़ादरी :

यहां मेरी गुज़ारिश यह है कि यह जुज़िया किस किताब में है कि, ''चंदा सिर्फ़ उसी काम के लिए सही है, जो फ़र्ज़ व वाजिब और शरअ़न ज़रूरी हो।'' क्या जो काम जाईज़ हो और मुस्तहिब हो उसके लिए चंदा करना ग़लत है? वाह रे मुफ़्ती, वाह रे फ़तवा। अब आप अपना ही शेअ़र सुन लीजिएः

गर हमीं मुफ़्ती व हमीं इफ़्ता
कारे उम्मत तमाम ख़्वाहिद शद

दूसरों को जाहिल, अनपढ़ कहने वाले अपनी भी ख़बर ले लो।

शैतानी वस्वसा :

मैंने इब्तेदा में यह दावा किया था कि, मौलाना का ख़्याल है कि, इस वक़्त दीन का काम सिर्फ़ मेरी तक़रीरों और मेरी तहरीरों से चल रहा है, अगर मेरा यह दावा सही है तो यक़ीनन शैतानी वस्वसा है। अब मेरे इस दावे की सेहत व ग़लत को जानने के लिए मुलाहिज़ा करें और यह जो अ़व्वाम की बड़ी तादाद ने नियाज़ व नज़र, तीजे, दस्वें, चालीस्वें, उर्स, जलसे और जुलूस को फ़र्ज़ व वाजिब समझ लिया है और शरअ़न ज़रूरी समझ लिया है कि हर हाल में करना ही है। ख़्वाह गरीब हो या मालदार, भले ही उधार और क़र्ज़ ले कर करे। इस ज़्यादती और गुलू में बड़ा दख़ल उन मौलवियों और मुक़र्रिरों का है, जिन्होंने उन कामों के जाईज़ होने का सुबूत तो दिए और वहाबियों का रद करके अपनी पबलिक को ख़ुश करते रहे लेकिन खुल कर यह ना बता सके कि, यह काम सिर्फ़ जाईज़ व मुस्तहिब हैं, ज़रूरी नहीं। अगर कोई ना भी करे तो गुनहगार नहीं और उन कामों के लिए क़र्ज़ और उधार लेना मुनासिब नहीं। उन्हें तो हर वो बात कहना है, जिससे पबलिक ख़ुश हो, प्रोग्राम मिलें, नज़राने बढ़ें, इमामत चलती रहे, मुरीदों की तादाद बढ़ती रहे भले ही दीन का कुछ कुछ हो और अ़व्वाम पूड़ियां, हलवे, खिचड़े और मलीदे पकाने खाने और दरगाहों के चक्कर लगाने ही को इस्लाम समझने लगें।

गुज़ारिशे क़ादरी :

क़ारेईने किराम! फ़ैस्ला करें कि, जो दावा हम ने उनके ख़्याल के बारे में किया था वो सही है या नहीं? आए दिन वहाबियों के हमले होते रहते हैं, वो उलमा जो उनका दनदाने शिकन जवाब देते हैं और मज़कूरा चीज़ों के जवाज़ का सुबूत देते हैं, वो सब बेकार हैं। उन्हें दीन का कोई दर्द नहीं, वो नज़राने के पीछे दौड़ने वाले हैं, मुरीदों की तादाद बढ़ाने में लगे हैं, ख़्वाह दीन का कुछ हो। यानी वो दीन को कुछ नहीं कर रहे हैं। उलमाए हक़ सब कुछ करने के बाद भी मौलाना के नज़दीक कुछ नहीं कर रहे हैं। जानते हैं क्यों? सिर्फ़ इस लिए कि जहां यह बताया कि तीजे, चालीस्वें वग़ैरह जाईज़ हैं,

वहीं यह क्यों नहीं बताया कि यह ज़रूरी नहीं। ना करें तब भी कोई गुनाह नहीं। क्योंकि मौलाना के नज़दीक दीन का सब से बड़ा काम यह है कि जितने जाईज़ व मुस्तहिबात और मरासिमे अहले सुन्नत हैं, उनके बारे में यह बता दिया जाए कि यह फ़र्ज़ नहीं। ना करो जब भी कोई गुनाह नहीं। यह है उनकी समझदारी और उनकी सब से बड़ी दीनदारी।

तजज़िया :

अब हम मौलाना के पूरे इक़्तेबास का अलग अलग तजज़िया करते हैं। अव्वलन हमें उनका पहला ही जुमला तस्लीम नहीं कि, ''एक बड़ी तादाद ने इसको फ़र्ज़ व वाजिब समझ लिया है।'' यह बेजा इलफ़ाम और अपनी समझ को दूसरे पर थोंपना है। हैरत है आख़िर मौलाना के यहां किसी के फ़र्ज़ व वाजिब होने का दारोमदार किस पर है? क्या किसी चीज़ के करने से यह समझा जाएगा कि वो इसे फ़र्ज़ समझ कर कर रहा है। अगर ऐसा ही है तो शाह अ़ब्दुर्रहीम मुहद्दिसे दहेलवी के बारे में क्या ख़्याल है? वो हमेशा मीलाद शरीफ़ करते रहे और आ़ला हज़रत सरकार के बारे में क्या ख़्याल है? जो हमेशा 12 रबीउन्नूर शरीफ़ को जश्ने विलादत मनाते रहे। देखिए 'हयाते आ़ला हज़रत' क्या यह हज़रात फ़र्ज़ समझकर कर रहे थे? अगर आप यह कहें कि, वो एक ज़बर्दस्त आ़लिमे दीन थे, उनके बारे में ऐसा ख़्याल नहीं किया जा सकता। तो हम कहेंगे कि, जनाब उलमा का फ़ेअ़ल अ़व्वाम के लिए दलील होता है। बक़ौल आपके ''अ़व्वाम को गुमराही से बचाने के लिए तर्क कर देना चाहिए ताकि लोग फ़र्ज़ व वाजिब ना समझ बैठें। यह मुस्तहिब ही तो है कि ना करें तब भी कोई गुनाह नहीं। इसी अ़क़्ल पर रोना आता है।''

क़ाबिले ग़ौर :

यह है कि किसी के फ़ेअ़ल से कोई दूसरा फ़र्ज़ व वाजिब समझ ले, यह उसके समझ की ग़लती है। फिर भी एक हद तक सोचा जा सकता है। मगर किसी के फ़ेअ़ल से उसकी समझ को समझ लेना और इस तरह यक़ीन के साथ कह देना कि, ''वो फ़र्ज़ व वाजिब समझ रहा है'' यह आप ही का कमाल है। दूसरी बात यह है कि मौलाना हर एक का ज़हन आप जैसा नहीं होता। जब वहाबियों की तरफ़ से हमला हुआ कि, मज़कूरा चीज़ें नाजाईज़ हैं तो अहले सुन्नत की तरफ़ से उलमाए हक़ ने उनके जवाज़ के दलाईल पेश किए। मौलाना आपको इतना तो मालूम होगा कि, किसी चीज़ का मुस्तहिब होना और चिज़ है और किसी चीज़ का फ़र्ज़ होना और है। वो आ़लिम थे, वो जानते थे और जानते हैं कि हमने जब मज़कूरा चीज़ों को जाईज़ व मुस्तहिब कहदिया तो उसीसे समझ में आगया कि वोह फर्ज़ नहीं। इसलिए कि जाइज़ व तुसतहेब कहने का लाज़मा यह है कि, वह फ़र्ज़ नहीं है। अगर यह समझ में ना आए तो और आसान अंदाज़ में समझें कि, जब कह दिया कि दिन है तो इसका लाज़मा यह है कि रात नहीं है। मौलाना कुछ समझा भी करें।

अब हम आपसे पूछते हैं कि, आपने इसी किताब के स.24 पर लिखा है कि, ''हर जाईज़ पर अ़मल करना ज़रूरी नहीं। अलबत्ता हर नाजाईज़ से बचना ज़रूरी है।'' मौलाना सुनिए! अगर हर जाईज़ पर अ़मल करना ज़रूरी नहीं है तो ना करना भी तो ज़रूरी नहीं है। मस्लन पानी पीना ज़रूरी नहीं है तो ना पीना भी तो ज़रूरी नहीं। जब दोनों पहलू बराबर है तो फिर आप बंद करवाने पर ही क्यों लगे हैं। आख़िर लोग अ़मल करते रहें तो आपको क्या परेशानी है। जब कि आपको कम से कम इतना तो मालूम ही होगा कि, अ़मल करने में बहरहाल फ़ाएदा है।

क़ारेईन! तवज्जोह करें कि, एक काम ऐसा है कि ना करने में कोई गुनाह नहीं और करने में कोई फ़ाएदा भी नहीं और एक काम ऐसा है कि ना करने में कोई गुनाह नहीं और करने में फ़ाएदा ही फ़ाएदा है। तो कौन ज़ीअ़क़्ल यह कहेगा कि, ''ना करने में कोई गुनाह नहीं है, इस लिए ना करो अगरचे करने में फ़ाएदा हो।'' मेरी समझ में नहीं आता कि, आप मुबल्लिग़ हैं या मुख़र्रिब हैं? इतनी भी अ़क़्ल नहीं है कि ना करने में गुनाह नहीं मगर करने में फ़ाएदा है, तो फ़ाएदे के लिए किया जाएगा। लोगों के करने से आपने समझ लिया कि वो फ़र्ज़ समझ कर कर रहे हैं और अगर हम समझ लें कि आपकी तहरीर से वहाबियों के तर्ज़े तहरीर की बू आती है। कहीं दरे पर्दा आप हिमायत तो नहीं कर रहे हैं? तो आप नाराज़ हो जाएंगे। हालांकि आपको नाराज़ नहीं होना चाहिए। इसलिए कि अगर आप पूरी मिल्लत के बारे में ऐसा सोच सकते हैं तो हम अगर आपके बारे में ऐसा सोच लें तो क्या ग़लत है? लेकिन हम ज़्यादा गुमान करने से बचते हैं इसलिए कि सरकारे दो आ़लम ﷺ ने फ़रमाया कि, तर्जुमा : ''ज़्यादा गुमान करने से बचो। इसलिए कि बाअ़ज़ गुमान गुनाहे कबीरा हैं'' और हमें गुनाहे कबीरा का मुरत्तकब नहीं होना है। क्या आ़ला हज़रत सरकार के ज़माने में यह सब नहीं होते थे? मगर जब आ़ला हज़रत सरकार लिखें तो इस तरीक़े से लिखें कि, अगर फ़र्ज़ समझने का ख़तरा हो। मगर आंजनाब ने तो एक बड़ी तादाद के फ़र्ज़ समझने का दावा ही कर दिया।

अब मौलाना के दूसरे जुमले को देखें और दबी हुई चिंगारी का अंदाज़ा लगाएं। लिखते हैं, ''वहाबियों का रद करके अपनी पबलिक को ख़ुश करते रहे लेकिन खुल कर यह ना बता सके कि यह काम सिर्फ़ जाईज़ व मुस्तहिब है, ज़रूरी नहीं।''

गुज़ारिशे क़ादरी :

क़ारेईन से सिर्फ़ इतनी गुज़ारिश है कि, मौलाना के तेवर और तर्ज़े तहरीर को मुलाहिज़ा करें। मौलाना की तहरीर का अंदाज़ा बता रहा है कि वहाबियों का रद करना उनके नज़दीक कोई बड़ी बात नहीं। जब कि आ़ला हज़रत सरकार ने रद्दे वहाबिया को फ़र्ज़े आ़ज़म लिखा है और मैंने अपने मज़मून के शुरू ही में फ़तावए रज़विया के हवाले से साबित कर दिया है। मगर मौलाना के नज़दीक सब से बड़ा फ़र्ज़ यह है कि,

''मरासिले अहले सुन्नत शरअ़न ज़रूरी नहीं हैं। ताकि लोग सब छोड़ दें।'' (मआ़ज़्ज़ल्लाह) मज़ीदे बरां आप हज़रात मौलाना का नज़रया देखें, कैसा लिखते हैं कि, ''वहाबियों का रद करके अपनी पबलिक को ख़ुश करते रहे।'' मैं पूछता हूं, क्या यह बदगुमानी नहीं? सारे उलमा सिर्फ़ पबलिक को ख़ुश करने के लिए रद्दे वहाबिया करते हैं? कोई ऐसा नहीं है जो अल्लाह की रज़ा के लिए रद्दे वहाबिया करता हो। सिर्फ़ दुनिया में यही एक बचे हैं जो अल्लाह की रज़ा के लिए काम करते हैं, बाक़ी सब दुनियादार हैं। (मआ़ज़्ज़ल्लाह) दूसरी बात यह कि, उन्होंने किसी के दिल में झांक के कैसे देख लिया कि यह पबलिक की रज़ा के लिए करते हैं या अल्लाह की रज़ा के लिए करते हैं? जब कि हदीस शरीफ़ में आया है कि, ''मोमिन के बारे में अच्छा गुमान करो।'' क्या यही अच्छा गुमान है?

बुज़ुर्गों के मज़ार पर चादर डालना :

एहकामे शरिअ़त–स.79 पर आ़ला हज़रत सरकार ने फ़रमाया कि, ''बुज़ुर्गों के मज़ार पर चादर डालने, रौशनी करने, इम्तियाज़ देने, क़लूबे अ़व्वाम में वक़्अ़त (इज़्ज़त) लाने की सख़्त हाजत हुई। इससे मना करने वाले या तो सख़त कज फ़हम (छोटी सोच) व जाहिल और हालते ज़माना से नरे ग़ाफ़िल हैं या वही बे अदब महरूम हैं, जिन के क़लूब में अ़ज़मते औलिया से ख़ार है।'' मौलाना ततहीर साहब देखो, यहां आ़ला हज़रत सरकार का तेवर कैसा है? इन सब चीज़ों के बंद करवाने के लिए आप बहुत परेशान हैं। बताईए आप जाहिल कज फ़हम हैं या आपके दिल में अ़ज़मते औलिया से ख़ार है?

एक से ज़ाईद चादरें डालना :

अभी माज़ीए क़रीब के कुछ दिनों से सुनने में आ रहा है कि, कुछ लोगों को बुज़ुर्गों के मज़ार पर एक से ज़ाईद चादर डालने से तक्लीफ़ होती है। उन का कहना है कि, ''एक से ज़ाईद चादर डालना फ़िज़ूल ख़र्ची है।'' उनसे कौन पूछे कि, अपने नज़राने के बारे में भी कभी सोचा, यह फ़िज़ूल ख़र्ची है या नहीं? कि दो सौ रूपये किराया लगता है तो पांच सौ ले लो और पांच सौ नज़राना ले लो। क्या यह कम है? मगर एक हज़ार की जगह पर पांच हज़ार लेना फ़िज़ूल ख़र्ची है या नहीं? बस सिर्फ़ बुज़ुर्गों के मज़ार पर ही फ़िज़ूल ख़र्ची नज़र आती है? इसी को कहा जाता है :

दिल की दबी चैन नहीं लेने देती

अब मैं आपके सामने आ़ला हज़रत सरकार को वो क़ौल पेश करता हूं, जो उन हज़रात की दलील है। आ़ला हज़रत सरकार एहकामे शरीअ़त के स.80 पर तहरीर फ़रमाते हैं कि, ''**जब चादर मौजूद हो और हुनूज़ वो पुरानी ना हुई हो या ख़राब ना हुई हो तो बेकार चादर चढ़ाना फ़िज़ूल है। बल्कि जो दाम इस में सर्फ़ करें, वो वलीअल्लाह के ईसाले सवाब के लिए मोहताज को दें**।'' अब मैं कहता हूं, अपने मक़्सद के हुसूल के लिए आ़ला हज़रत सरकार की सिर्फ़ इतनी इबारत पेश करना और इसके बाद इबारत को छोड़ देना नाइंसाफ़ी है या नहीं? इसके बाद की

इबारत जहां से एक से ज़ाईद चादर चढ़ाने का सुबूत मिलता है, उसको छोड़ दिया है और वो इबारत यह है। आ़ला हज़रत सरकार तहरीर फ़रमाते हैं, ''**हां! जहां मामूल हो कि चढ़ाई हुई चादर जब हाजत से ज़्यादा हो तो ख़ुद्दाम व मसाकीन और हाजतमंद ले लेते हों, इस नीय्यत से डाले तो कोई मुज़ाईक़ा नहीं कि यह भी तसद्दुक (सदक़ा) है।**'' आ़ला हज़रत सरकार की इस इबारत को पढ़ कर कारेईन ख़ुद फ़ैस्ला कर लें कि एक से ज़ाईद चादर डालने का रास्ता आ़ला हज़रत सरकार ने बताया या नहीं?

लफ़्ज़ वहाबी अच्छा है, वहाबियत अच्छी नहीं:

मौलाना ततहीर ने अपनी एक किताब में लिखा कि, ''लफ़्ज़ वहाबी अच्छा है, वहाबियत अच्छी नहीं।'' यह लफ़्ज़ वहाबी को अच्छा कह कर क्या पैग़ाम देना चाहते हैं? यही जानें, मगर मौलाना के इस जुमले पर मेरे कुछ सवालात हैं, मुलाहिज़ा करें। पहले उसूल समझ लीजिए।

फ़ने मुंतिक़ में एक होता है, दाल एक होता है मदलूल। अब दोनों की तारीफ़ें सुनें। दाल वो जो किसी पर दलालत करे। मदलूल वो जिस पर कोई दलालत करे। यानी जो दलालत करे, ख़्वाह लफ़्ज़ हो या ग़ैर लफ़्ज़, वो दाल होगा और जिस पर दलालत करेगा वो मदलूल होगा। मस्लन लफ़्ज़ ज़ैद कि जब लफ़्ज़ ज़ैद बोले तो इस लफ़्ज़ ने ज़ाते ज़ैद पर दलालत किया तो लफ़्ज़ ज़ैद दाल है और ज़ाते ज़ैद मदलूल। इतना समझने के बाद अब मौलाना के जुमले को देखें कि, ''लफ़्ज़ वहाबी अच्छा है, वहाबियत अच्छी नहीं है।'' में पुछताहू वहाबी वही है जीसके अन्दर वहाबियत है तो जब वहाबियत ही अच्छी नही तो वहाबी कैसे अच्छा होगया। हो सकता है मौलाना जवाब दें कि हम ने वहाबी को नहीं लफ़्ज़ वहाबी को अच्छा कहा है। तो हम कहेंगे कि, लफ़्ज़ वहाबी को अच्छा कह कर आप तबलीग़ का कौन सा फ़र्ज़े आ़ज़म अदा करना चाहते हैं। मज़ीद हम कहते हैं कि, अगर लफ़्ज़ ही मुराद लिया जाए तो जैसे लफ़्ज़ वहाबी अच्छा है, वैसे ही लफ़्ज़ वहाबियत भी अच्छा है और अगर मदलू मुराद लिया जाए तो ना वहाबी अच्छा है ना वहाबियत अच्छी है, दोनों बुरे हैं। फिर मौलाना आप से गुज़ारिश है कि, आप वहाबी में लफ़्ज़ मुराद ले कर और वहाबियत में मानी मुराद ले कर कौन सा पैग़ाम देना चाहते हैं? क्या यह दरे पर्दा वहाबियों की हिमायत नहीं है? क्या यह गुमराही का दरवाज़ा नहीं खोलना है? मौलाना आपको मालूम होना चाहिए कि अच्छे और बुरे होने का ऐतेबार और तारीफ़ व तौहीन का ऐतेबार अ़र्फ़ पर होता है, अब आप अ़र्फ़ समझ लीजिए।

अ़र्फ़ की तारीफ़ फ़तावए रज़विया की रौशनी में :

अपने क़त्र की बिलादे कसीरा के तआ़मुले नास को अ़र्फ़ कहते हैं और जनाब मुल्क के बिलादे कीरा नहीं बल्कि पूरी मुल्क में वहाबियों को बुरा समझते हैं और वहाबी है भी बुरा। आपको यह कैसे यक़ीन हो गया कि आपके लफ़्ज़े वहाबी कहने से पबलिक भी

लफ़्जे वहाबी हील समझेगी। जब कि आप ही ने सारे उलमा व ख़ुतबा को मशवरा दिया है कि, ''सारे उलमा ने जहां जलसा, जुलूस, तीजा, चालीस्वां वग़ैरह को जाईज़ व मुस्तहिब कहा है, वहीं उन पर लाज़िम है कि वो यह भी बताएं कि, यह फ़र्ज़ नहीं है। वरना अंपढ़ों की तादाद ज़्यादा है। लोग फ़र्ज़ व वाजिब ना समझ लें।'' मैं पूछता हूं, यह मशवरा आप यहां क्यों भूल गए? अगर लफ़्ज़े वहाबी को अच्छा कहने से लोग वहाबी को अच्छा समझ लें और गुमराह हो जाएं, तो इस का ज़िम्मादार कौन होगा? इसलिए कि अंपढ़ों की तादाद ज़्यादा है, बक़ौल आपके।

दूसरा क़ानून, जब मुब्दा अच्छा होता है तो मशतिक़ भी अच्छा होता है और जब मुब्दा बुरा होता है तो मशतिक़ भी बुरा होता है। जब आपने लफ़्ज़े वहाबी को अच्छा कह दिया तो वहाबियत बुरी कैसे हो गई? और फिर अगर आप वही रट लगाएं कि, ''लफ़्ज़े वहाबी को अच्छा कहा है।'' तो फिर आप मुझे भी इजाज़त दीजिए कि मैं आपसे एक सवाल करूं कि, बिलफ़र्ज़ अगर आप मस्जिदे हराम से आए हों तो क्या हम आपको हरामी कह सकते हैं? इस लिए कि अगर लफ़्ज़ वहाबी बुरा नही ंतो लफ़्ज़े हरामी बदर्जए औला बुरा नहीं।

क़ानूनी ग़लती :

मौलाना ततहीर साहब ने अपनी इसी किताब के स. 62 पर मिशकात शरीफ़ की एक हदीस नक़्ल की और उसकी तशरीह करते हुए एक क़ानून बयान किया, जो ग़लत है। अब आप देखें कि वो हदीस क्या है। तर्जुमा : ''यह ना कहो कि अल्लाह चाहे और फ़लां चाहे, बल्कि यह कहो कि अल्लाह चाहे, फिर फ़लां चाहे।'' इस हदीस की शरह करते हुए लिखते हैं कि, ''और भी जब लाना शिर्क नही ंतो और की जगह फिर क्यों इस्तेमाल करने के लिए कहा गया?'' इस की वजह बयान करते हुए लिखते हैं, ''उर्दु में (और) अ़रबी में (वाव) सिर्फ़ शिरकत के लिए आता है। जब कि (फिर) और अ़रबी में (सुम्मा) इसके साथ ताख़ीर और दूरी के लिए आता है। 'वाव' की जगह 'सुम्मा' इस लिए लाए कि किसी को यह वहम ना हो जाए कि (मआज़्ज़ल्लाह) हुज़ूर ﷺ, अल्लाह ﷻ के शरीक व साझी हैं और काएनात का निज़ाम दोनों मिल कर चला रहे हैं।''

सब से पहले मेरी गुज़ारिश तो यह है कि, उनका बयान कर्दा क़ानून ही सही नहीं है कि अ़रबी में 'वाव' सिर्फ़ शिरकत के लिए आता है। बल्कि शिरकत के साथ इतना बढ़ाना ज़रूरी है कि इस के लिए मसावात व मईय्यत लाज़िम नहीं। ताकि सामअ़ व क़ारी ग़लत फ़हमी में मुब्तेला हो कर ''अल्लाह व रसूल चाहें'' जैसा जुमला बोलने वाले पर कुफ़्र व शिर्क का फ़तवा लगा कर ख़ुद उस की ज़द में ना आएं। इस लिए कि आ़ला हज़रत सरकार ने الامن والعلی के अंदार तहरीर फ़रमाया है कि, ''यह कहना कि, अल्लाह व रसूल चाहें तो यह काम हो जाएगा। यह बात फ़ीनफ़्सा मम्नूअ़ नहीं। इस लिए कि इस में 'वाव' मुतलक़े जमा के लिए

है, ना मसावात के लिए, ना मईय्यत के लिए। नीज़ 'उसूलुलशाशी' के हाशिए में है,

الواوالمطلق الجمع

المطلق : "معنی الاطلاق کون الجمع اعم من ان یکون مع الترتیب والمقارنه اوبدونهما"

الجمع : "ای لاشتراک المعطوف والمعطوف علیه فی الحکم المتعلق بالاول

अब बताईए मौलाना ततहीर साहब, कहां गया वो आपका क़ानून कि 'वाव' अ़रबी में सिर्फ़ शिरकत के लिए आता है। आ़ला हज़रत सरकार तो कहते हैं कि, ''वाव, मुतलक़ जमा के लिए है, ना मसावात के लिए और ना मईय्यत के लिए।'' इस का मतलब यह है कि, कभी कभी मसावात व मईय्यत के लिए भी आता है और आप कहते हैं कि, ''अ़रबी में 'वाव' सिर्फ़ शिरकत के लिए आता है।'' बताईए जो 'नैहुमीर' में है, उस में 'वाव' कैसा है? और جاع البرد والجبات जो 'हदियतुलनहु' में आया है, यह 'वाव' किस लिए है?

मज़ीद देखिए कि आ़ला हज़रत सरकार ने किस तरह आप जैसे क़ौल करने वालों की तरदीद की है। फ़रमाते हैं कि,

اقول وھٰذه نكتة غفل عنها بعض الجهلائ فجوز ماشاء الله ثم شاء فلان و زعم ان لواتی بالواو لكان شركاً جليا فانما يتم ان كانت الواو المستويه وهو باطل قطعاً قال الله تعالیٰ ان الله وملائكته يصلون علیٰ النبی قال الله تعالیٰ اغنهم الله و رسوله

आ़ला हज़रत सरकार की इन इबारतों से तो मौलाना के क़ानून की धज्जी उड़ गई। लेकिन क़ारेईन शायद ना समझे हों। इल लिए हलकी सी वज़ाहत कर देता हूं कि, में 'वाव' किस के लिए है। اعنهم الله ورسوله में 'वाव' किस के लिए है। मौलाना के बक़ौल, ''इन सब जगहों पर 'वाव' नहीं 'सम' होना चाहिए।'' इस लिए कि मौलाना के नज़दीक 'वाव' सिर्फ़ शिरकत के लिए आता है। दूसरी बात यह कि मौलाना ने लिखा कि, ''वाव, सिर्फ़ शिरकत के लिए आता है और 'सम' ताख़ीर और दूरी के लिए भी आता है। इस लिए 'वाव' की जगह पर 'सम' लाने का हुक्म हुआ। ताकि किसी का शरीक होने का वहम ना हो जाए।'' हम कहते हैं कि, मौलाना आपने अभी कहा कि, ''सम, के अंदर शिरकत का मानी है'' तो 'सम' भी तो लाने में शिरकत का वहम हो सकता है। बस फ़र्क़ इतना है कि अल्लाह ﷻ पहले और मुस्तफ़ा ﷺ बाद में। सही बात यह है हदीसे पाक लफ़्ज़ी और मानवी दोनों ऐतेबार से बिल्कुल सही थी। इस लिए ख़ुदा ﷻ की मशीय्यत, मशीय्यते ज़ातिया है और सरकार ﷺ की मशीय्यत, मशीय्यते अ़ताईया है। इसी मशीय्यते अ़ताईया मुबारका के तहत सहाबए किराम सरकार ﷺ के नामे पाक को अल्लाह ﷻ के नाम के साथ मिल कर कहा करते थे कि, ''अल्लाह ﷻ व रसूल ﷺ चाहें तो यह काम हो जाएगा।'' मगर चूंकि तरीक़ए अदब के ज़्यादा अक़रब यह है कि, फ़र्क़ मरातिबे नफ़्स कलाम से वाज़ेह हो ताकि किसी अहमक़ को

तअ़न करने का मौक़ा ना मिले। इसलिए सिर्फ़ दहन दोज़ी मुख़लिफ़ान की वजह से बदल दिया। देखो ''अल–अमन वल–उला''। इस लिए सरकार को ख़्याल आया, फिर भी नहीं बदले। हत्ता कि काफ़िर ने बका, फिर भी नहीं बदले। इस लिए कि बात फ़ी नफ़्सा ममनू नहीं थी। जब तुफ़ैल बिन सख़रा ने ख़्वाब देखा तब बदला। अ़ाला हज़रत सरकार का जुमला देखो, फ़रमाते हैं, ''सिर्फ़ दहन दोज़ी मुख़ालिफ़ान की मस्लहसे दाई तबदीले लफ़्ज़ है।''

ग़ैर ज़रूरी को ज़रूरी करना :

मौलाना ततहीर साहब अपनी इसी किताब के स. 108 पर लिखते हैं कि, ''उनके लिए ज़रूरी है यानी तक़रीरों व तहरीर वालों पर ज़रूरी है कि जहां उन्होंने मरासिले अहले सुन्नत के जवाज़ का सुबूत दिए, वहीं और इसी मौक़े पर फ़ौरन यह बताईए कि यह सिर्फ़ जाईज़ हैं, मुस्तहिब हैं, फ़र्ज़ व वाजिब, शरअ़न लाज़िम व ज़रूरी नहीं। ना करने वाला भी गुनहगार नहीं।''

गुज़ारिशे क़ादरी :

मैं पूछता हूं, मौलाना ततहीर से कि, क्या यह ग़ैर ज़रूरी को ज़रूरी करना नहीं है। अगर यह बताना ही ज़रूरी है कि यह फ़र्ज़ नहीं। ना करने वाला गुनहगार नही ंतो देखिए कितने बड़े बड़े लोग इसकी ज़द में आते हैं। आख़िर अ़ाला हज़रत सरकार और हुज़ूर सदरूल अफ़ाज़िल भी तो तक़रीर व तहरीर वाले थे। उन्होंने यह क्यों नहीं बताया कि, ''यह सिर्फ़ जाईज़ है। ना करने वाला गुनहगार नहीं।'' यह लीजिए फ़तावए सदरूल अफ़ाज़िल–स.583। हुज़ूर सदरूल अफ़ाज़िल ने फ़रमाया कि, ''**फ़ातेहा, सूव्म वग़ैरह उमूरे ख़ैर जिस में ईसाले सवाब किया जाता है, उनका इस्तहसान व इस्तहबाब दलाईले शरिअ़ा से साबित है**।'' यहां मौलाना ततहीर के मुताबिक़ हुज़ूर सदरूल अफ़ाज़िल को कहना चाहिए कि, ''फ़र्ज़ नहीं है, ना करने वाला गुनहगार भी नहीं।'' आपके ज़रूरी पर उन्होंने क्यों नहीं अ़मल किया और देखिए अ़ाला हज़रत सरकार ने फ़तावए रज़विया–जि.11, स.268 पर लिखा (मीलाद शरीफ़ और क़ियाम के तअ़ल्लुक़ से) कि, ''**यह सब बातें जाईज़ व मस्तहसन हैं और बाईसे बरकत हैं**।'' गुज़ारिश यह है कि यहां अ़ाला हज़रत सरकार ने क्यों नहीं बताया कि, ''यह बातें सिर्फ़ जाईज़ व मुस्तहसिन हैं, ज़रूरी नहीं। ना करने वाला गुनहगार नहीं।'' बताईए मौलाना ततहीर साहब यह अ़ाला हज़रत सरकार ने आपके ज़रूरीर पर अ़मल क्यों नहीं फ़रमाया? और आगे देखिए अ़ाला हज़रत सरकार इसी जि.11 के स.16 पर तहारा फ़रमाते हैं कि, ''**क़ियामे वक़्त ज़िक्रे विलादत सैय्यदुल अनाम बिलशुबाहे मुस्तहिब व मुस्तहसिन है**।'' मौलाना ततहीर साहब! आप के क़ौल के मुताबिक़, ''अ़ाला हज़रत सरकार को यह लिखना चाहिए कि, यह ज़रूरी नहीं है, सिर्फ़ जाईज़ व मुस्तहिब है। इस का ना करने वाला गुनहगार नहीं।'' बताईए अ़ाला हज़रत सरकार ने आपके ज़रूरी पर क्यों नहीं अ़मल किया? हो सकता है कि आप कहें कि

वो ज़माना अलग था, यह अलग है। अब हालात बदल गए हैं। तो सुनिए! हालात कुछ नहीं बदले, बस फ़र्क़ इतना है कि आप बदल गए हैं। आ़ला हज़रत के ज़माने में भी यह सब होता थ। लेकिन आपका यह ज़रूरी वाला क़ानून कहीं नहीं मिलता।

गुमराही और कुफ़्र :

मौलाना ततहीर साहब अपनी इसी किताब के स.125 पर लिखते हैं कि, ''जो गोश्त खाने को मुतलक़न नाजाईज़ व हराम कहे, वो गुमराह है। क्योंकि इस्लाम में गोश्त खाना जाईज़ है, ज़रूरी नहीं। अगर ज़रूरी होता तो फ़र्ज़ व वाजिब कहा जाता।''

मौलाना ततहीर साहब ने गोश्त खाना मुतलक़न नाजाईज़ व हराम कहने वाले को गुमराह लिखा है। अब देखिए आ़ला हज़रत सरकार क्या लिखते हैं। यह लीजिए फ़तावए रज़विया शरीफ़–जि.6, स.66। लिखते हैं कि, ''**गोश्त खाने को मुतलक़न हराम कहना कुफ़्र है**।''

कुफ़्र और गुमराही में फ़र्क़ :

फ़तावए रज़विया–जि.6, स.209 पर आ़ला हज़रत सरकार तहरीर फ़रमाते हैं, ''**हाशा (हरगिज़) इन में कोई बात कुफ़्र तो कुफ़्रे गुमराही की भी नहीं**।'' आ़ला हज़रत सरकार की ईस इबारत से ख़ूब रौशन हो गया कि, गुमराही अलग शए है, कुफ़्र अलग शए है। यह फ़र्क़ तो मैंने आ़ला हज़रत सरकार की इबारत से साबित किया। अगर ज़रूरत पड़ी तो आने वाले क़िस्त में हम उसूली और क़ानूनी बहस करेंगे।

क्या बुज़ुर्गो के ज़िक्र से ख़ुदा का ज़िक्र मिटता है :

मौलाना ततहीर अहमद साहब अपनी किताब मज़कूरा के स.47 पर लिखते हैं कि, ''**अगर बुज़ुर्गो का ज़िक्र इस मंज़िल और हद को पहुंच जाए कि इसके ज़रिए ज़िक्रे ख़ुदा मिटने लगे या इसकी लज़्ज़त ख़त्म होने लगे। बुज़ुर्गो को पुकारना या उनसे मदद मांगना इस मंज़िल में पहुंच जाए कि, अल्लाह से दुआ़ मांगने में कमी आने लगे या इस का रिवाज ख़त्म होने लगे तो यह ख़ालिस बिदअ़ते सईय्या (गुनाह) है**।''

मज़कूरा इक़्तेबास को सामने रखें और मैं फ़तावए मुस्तफ़या–स.441 से सरकार मुफ़्तीए आ़ज़म को फ़तवे के चन्द जुमले पेश करता हूं। इस को मुलाहिज़ा करें। सरकार मुफ़्तीए आज़म तहरीर फ़रमाते हैं कि, ''**महबूबाने ख़ुदा व पेशवायाने दीन, हबीबे किबरिया ﷺ का ज़िक्र मुसलमानों के दीन में ज़िक्रे ख़ुदा ही है**।''

मर्दाने ख़ुदा ख़ुदा ना बाशिंद
लेकिन ज़ख़ुदा जुदाना बाशिंद

इन का ज़िक्र बाईसे रहमत व बरकत और कारे सवाब है। इन का ज़िक्र ख़ुदा की इबादत है। नीचे लिखते हैं कि, ''**देवबंदी जानते हैं कि, जब तक उन महबूबाने ख़ुदा का ज़िक्र मुसलमानों में राईज रहेगा। मुसलमानों को उनसे मुहब्बत रहेगी। वा उनके दामे तज़वीर (धोका) में आसानी से ना फंस सकेंगे। अ़जब बालाए अ़जब**।''

मैंने तो अभी तक यह सुना था और जाना था कि, बुज़ुर्गों की बारगाह में हाज़िर होने से बिगड़ा हुआ आदमी संवर जाता है, बदकार नेकोकार बन जाता है। मगर यह पहली बार सुन रहा हूं कि, ''बुज़ुर्गों की बारगाह में जाने से दरगाहों पर हाज़िरी देने से, अम्बिया और औलिया का ज़िक्र करने से लोग अल्लाह ही को भूले जा रहे हैं।'' (मआ़ज़्ज़ल्लाह) आ़ला हज़रत सरकार फ़रमाते हैं,

ज़िक्रे ख़ुदा जो उनसे जुदा चाहो नजदियों
वल्लाह ज़िक्रे हक़ नहीं कुंजी सक़र की है

हमारी दलील मुकम्मिल हो चुकी। लेकिन अब मैं ऐसी गुफ़्तगू करने जा रहा हूं जो अपना मिजाज़ है।

आप क्या समझते हैं कि ज़िक्रे अल्लाह यानी अल्लाह का ज़िक्र सिर्फ़ अल्लाह–अल्लाह करने से होता है। इसके अ़लावा से नहीं। आपकी तहरीरों से भी यही मतरशह (साबित) होता है। अगर किसी ने ''वलीअल्लाह'' कहा या ''या रसूलअल्लाह'' कहा तो अल्लाह का ज़िक्र हुआ कि नहीं?

हम आपसे पूछते हैं कि, ज़िक्रे अल्लाह की नक़ीज़ (बुराई) क्या है? अ़दम ज़िक्रे अल्लाह या ज़िक्रे वलीअल्लाह या कुछ और?

इसके बाद आप यह बताईए कि, महबूबाने ख़ुदा का ज़िक्र, ज़िक्रे अल्लाह है या अ़दम ज़िक्रे अल्लाह? अगर आप जवाब दें कि, ''ज़िक्र वलीअल्लाह, ज़िक्रे अल्लाह है'' तो हम कहेंगे, जब तो बिल्कुल ठीक है। फिर आपको परेशानी क्यों है? फिर आप यह क्यों कहते हैं कि, ''औलियाअल्लाह के ज़िक्र से अल्लाह का ज़िक्र मिट रहा है।'' जानते हैं! आपके कहने का क्या मतलब हो गया कि ज़िक्रे अल्लाह से ज़िक्रे अल्लाह मिट रहा है? अ़जब बालाए अ़जब! कहने से पहले समझ लिया करें और अगर आप जवाब दें कि, ''ज़िक्रे वलीअल्लाह अ़दमे ज़िक्रे अल्लाह है'' तो हम कहेंगे कि, पहले आप सरकार मुफ़्तीए आ़ज़म के फ़तवे को पढ़ लीजिए, जो हमने माक़ब्ल में नक़्ल किया है कि, ''**महबूबाने ख़ुदा का ज़िक्रे अल्लाह ही का ज़िक्र है**।'' और आप कहते हैं कि, ''अ़दम ज़िक्रे अल्लाह है।'' हमारी गुज़ारिश है कि, दिमाग़ का इलाज करालें ताकि बात सही समझ में आए।

मज़ीद बताईए कि تبت یدابی لهب पढ़ना ज़िक्रे अल्लाह है या नहीं? इस में तो कहीं अल्लाह का नाम नहीं आया। सूरए मुनाफ़िक़ून पढ़ना ज़िक्रे अल्लाह है या नहीं? वो आयात जिन में कुफ़्फ़ार या बुतों का ज़िक्र है, उन को पढ़ना ज़िक्रे अल्लाह है या नहीं?

ख़्याल रहे कि, इन आयात में अगरचे मज़कूरा कुफ़्फ़ार या बुत हैं। मगर कलाम तो अल्लाह का है। कलामे इलाही का ज़िक्रे अल्लाह है, मगर रहमते इलाही या नूरे इलाही का ज़िक्र, ज़िक्रे अल्लाह ना हो, यह कहां का इंसाफ़ है?

मौलाना ततहीर के बातिल ताबूत पर आख़िरी कील :

मौलाना ने अपनी इसी किताब (यानी ज़िक्रे ख़ुदा और ईमाम अहमद रज़ा) के स.107 पर लिखा है कि, ''एक बड़ी तादाद ने

नियाज़ व नज़र, तीजे, दस्वें, चालीस्वें, उर्स, जलसे और जुलूस को फ़र्ज़ व वाजिब और शरअ़न ज़रूरी समझ लिया है कि हर हाल में करना ही है। ख़्वाह ग़रीब हो या मालदार, उनमें बड़ा दख़ल मौलवियों—मुक़र्रिरों का है।''

दूसरा इक़्तेबास :

मौलाना किताबे मज़कूरा के इसी स.107 पर थोड़ा सा ऊपर लिखते हैं कि, ''आज ख़ुद अहले सुन्नत कहने वालों में एक बड़ा गिरोह ऐसा हो गया है, जिसका मज़हबे इस्लाम बस तरह तरह की नियाज़ें और फ़ातेहाएं, उर्स करना, दरगाहों की हाज़िरी, जलसे और जुलूस हो कर रह गया।''

तीसरा इक़्तेबास :

''**आज कल नमाज़ पढ़ने के बाद मदीना शरीफ़ की तरफ़ मूंह करके हाथ बांध कर हुज़ूर ﷺ पर सलातोसलाम पढ़ने का जो दस्तूर है, उसको भी कभी कभी छोड़ देना चाहिए। ताकि लोग इसको फ़र्ज़ व वाजिब ना समझने लगें**।''

मस्कत और दंदाने शिकन बहस :

क़ारेईन हज़रात! ग़ौर करें कि, मौलाना ने पहले इक़्तेबास में लिखा कि, ''**अ़व्वाम की एक बड़ी तादाद ने मरासिमे अहले सुन्नत को फ़र्ज़ व वाजिब समझ लिया है**।'' दूसरे इक़्तेबास में लिखा कि, ''**एक गिरोह के नज़दीक इस्लाम फ़ातेहा और जलसे, जुलूस हो कर रह गया**।'' तीसरे इक़्तेबास में लिखा कि, ''**सलाम पढ़ने का जो दस्तूर है, इसको कभी कभी तर्क कर देना चाहिए**।''

गुज़ारिशे क़ादरी :

यह लीजिए मिश्कात—बाबुल क़सद फ़िलअ़मल में है, ''**अल्लाह के नज़दीक अच्छा काम वो है, जो हमेशा हो**।'' इससे पता चला कि, हर कारे ख़ैर को पाबंदी से करना मुस्तहिब है।

मगर मुसीबत तो यह है कि, अगर आप पाबंदी से करेंगे तो मौलाना ततहीर कहेंगे कि, ''आपने फ़र्ज़ व वाजिब समझ लिया है।'' इसलिए अब हम उनके फ़र्ज़ व वाजिब की ख़बर लेते हैं।

क्या पाबंदी वजूब (वाजिब) की अ़लामत है?

मुसलमान हर ईद को अच्छे कपड़े पहनते हैं। हर जुमा को गुस्ल करते हैं, ख़ुशबू लगाते हैं, मदारिस में हर रमज़ान व जुमा में छुट्टी करते हैं, हर साल इम्तेहान लेते हैं, हर रात को सोते हैं, हर दोपहर को खाना खाते हैं। तो क्या उन सब को वाजिब समझते हैं? या पाबंदी करना वजूब की अ़लामत है?

मौलाना आपको मालूम होना चाहिए कि, हर ज़माने में अहले ईमान की अ़लामात मुख़्तलिफ़ रही हैं और हस्बे ज़माना अ़लामाते कुफ़्फ़ार से बचना अ़लामाते अहले ईमान इख़्तेयार करना ज़रूरी है। देखिए मिश्कात किताबुल ईमान अव्वल "इस्लाम में फ़रमाया गया, ''जिसने لا اله الا الله कह दिया, जन्नती हो गया। कि उस वक़्त कलमा पढ़ना ही ईमान की अ़लामत थी।'' और दखिए शरह। फ़िकहे अकबर मुल्ला अ़ली क़ारी फ़रमाते हैं कि, किसी ने ईमाम अबू हनीफ़ा से पूछा कि, ''**सुन्नी की अ़लामत क्या है?'' फ़रमाया, ''सैय्यदना उसमान व अ़ली से मुहब्बत**

रखना, शैख़ैन को तमाम उम्मत पर अफ़ज़ल जानना और चमड़े के मोज़े पर मसह करना'' इस तरह से और भी बहुत से दलाईल ज़हन में हैं। लेकिन तवालत के ख़ौफ़ से मैं आख़िरी और असल दलील पेश करके मुद्दुआ साबित करने जा रहा हूं।

यह लीजिए दुर्रे मुख़्तार बाबुल मियाह में, तर्जुमा : **होज़ से वज़ु करना अफज़ल हैं मोअ़तज़ला हौज़ से वज़ू करने को नाजाईज़ कहते हैं। लेहाज़ा उनको हम हौज़ से वज़े करके जलाएंगे**।''

मौलाना ततहीर अहमद साहब! माथे से पसीना पोछ कर अब उन जुमलों को पढ़ने के लिए तैय्यार हो जाएं, जो आने वाले हैं। यह जुमले आपकी जान पर आफ़त होंगे।

यह देखिए जाउलहक़–जि.अव्वल, स.245। अ़ल्लामा मज़कूरा बाला इबारतों को नक़्ल करने के बाद लिखते हैं कि, ''**देखो हौज़ से वज़ू करना, चमड़े के मोज़ों पर मसह करना वग़ैरह वाजबात में से नहीं हैं। लेकिन चूंकि उस ज़माने में इसके मुंकिर पैदा होगए थे। इस लिए उनको सुन्नी की पहचान क़रार दिया**।'' मौलाना ततहीर अहमद साहब! अब आगे का जुमला सुनिए। अ़ल्लामा लिखते हैं कि, ''**इसी तरह क़ियाम, मीलाद, फ़ातेहा वग़ैरह वाजबात में से नहीं हैं। मगर चूंकि इसके मुंकिर पैदा हो गए हैं। लेहाज़ा फ़ी ज़माना यह हिन्दुस्तान में सुन्नी होने की अ़लामत है और अ़लामते सुन्नियत का लिहाज़ बहरहाल मौकद है**।'' देखिए फ़तावए रज़विया–जि.11, स.87।

बोलिए मौलाना ततहीर साहब! अब क्या होगा आपके लिए। आप अ़लामते सुन्नियत ही को ख़त्म करना चाहते हैं, जिसको अ़ाला हज़रत सरकार ने फ़रमाया कि, ''**इसका लिहाज़ बहरहाल मौकद है**।''

इसी पर बस नहीं, अ़ल्लामा के आगे का जुमला सुनिए और यह जुमले आपके लिए मौत है। अ़ल्लामा लिखते हैं कि, ''**नीज़ शामी की इबारत से यह भी मालूम हुआ कि किसी जाईज़ या मुस्तहिब काम से बिला वजह लोग रोकें तो उसको ज़रूर करे**'' और यही अ़ल्लामा स.354 पर उसी तरफ़ इशारा करते हुए लिखते हैं कि, ''**हम इसकी तहक़ीक़ फ़ातेहा की बहस में कर चुके हैं कि, जिस मुस्तहिब काम को अ़ादाए दीन रोकने की कोशिश करें, उसको ज़रूर करना चाहिए**।''

फ़रमाईए मौलाना ततहीर साहब! आप कहते हैं कि, ''यह सब करना ज़रूरी नहीं। कभी कभी छोड़ दें।'' और अ़ल्लामा कहते हैं कि, ''ज़रूर करें।''

अ़ाला हज़रत का फ़तवा :

अ़ाला हज़रत सरकार के फ़तवे को पढ़ने से पहले आप हज़रात अ़ल्लामा या अहमद की एक तहरीर को पढ़ लें। (मरातुल मनाजीह–स.168) पर लिखते हैं कि, ''**जिस सुन्नत को लोगों ने छोड़ दिया हो, उस पर ख़ुद भी अ़मल करे और दूसरों को भी अ़मल की रूग़बत दिलाए। जैसे ज़मानए मौजूदा में दाढ़ी रखना**।'' अ़ल्लामा की इस इबारत से पता चला कि, दाढ़ी रखना सुन्त है। अब अ़ाला हज़रत सरकार का फ़तवा सुनिए।

आला हज़रत सरकार की बारगाह में एक सवाल हुआ कि, एक शख़्स से पूछा, ''तुमने दाढ़ी क्यों मुड़ाई?'' तो कहा, ''सुन्नत है।''

अब आला हज़रत सरकार का जवाब मुलाहिज़ा करें। आला हज़रत सरकार लिखते हैं कि, ''**अगर यह मतलब था कि दाढ़ी रखना सिर्फ़ सुन्नत है, फ़र्ज़ व वाजिब नहीं कि इसके तर्क से मैंने गुनाह किया। तो यह जवाब अगरचे उसका शैतानी है मगर कुफ़्र से बच जाएगा**।'' अब मौलाना ततहीर साहब से गुज़ारिश है कि, आप भी कहते हैं कि, ''यह सिर्फ़ जाईज़ है, मुस्तहिब है, तर्क में कोई गुनाह नहीं।'' आपके इस कहने से अगर कोई मज़ाराते औलिया की ज़ियारत छोड़ दे, दरगाहों पर हाज़िरी ना दे और उससे पूछा जाए कि, ''तू दरगाहों पर हाज़िरी क्यों नहीं देता या मज़ाराते औलिया की ज़ियारत क्यों नहीं करता?'' तो अगर वो जवाब दे कि, ''यह सिर्फ़ जाईज़ व मुस्तहिब है।'' बक़ौल मौलाना ततहीर के, ''फ़र्ज़ व वाजिब तो नहीं है कि गुनाह हो।'' तो बताईए आला हज़रत सरकार के फ़तवे की रौशनी में यह इस का जवाब शैतानी होगा या नहीं?

हमने माक़ब्ल में (बक़ौल मौलाना ततहीर के) की क़ैद लगाई है। इसकी वजह यह है कि अल्लामा यार अहमद ख़ान साहब ने मरातुल मनाजीह के स.178 पर लिखा है कि, ''**बुज़ुर्गो की यादगारें क़ायम करना सुन्नत है**।'' और इसी के आगे लिखते हैं कि, ''**इस जगह मरक़ात ने फ़रमाया कि, बिदअ़ते हुस्ना सुन्नत से मुल्हक़ (जुड़ा हुआ) है**।'' और आला हज़रत सरकार फ़तावए रज़विया–जि.11, स.103 पर तहरीर फ़रमाते हैं कि, ''**मज़ाराते औलिया पर तशरीफ़ ले जाना खुद हुज़ूरे अक़दस ﷺ व ख़ुलफ़ाए राशिदीन से साबित है**।'' इस से पता चला कि, मज़ाराते औलिया पर हाज़िर होना सुन्नते सरकार ﷺ व ख़ुलफ़ाए राशिदीन है। मज़ीद आला हज़रत सरकार इसी जिल्द के स.97 पर तहरीर फ़रमाते हैं कि, ''**जाहिलों में जो बिदअ़ते मिस्ल रक़्स व मज़ामीर एजाद कर लिए हैं, वो ज़रूर नाजाईज़ हैं। मगर उनसे ज़ियारत कि सुन्नत है, बिदअ़त ना हो जाएगी**।'' इसमें तो साफ़ आला हज़रत सरकार ने कह दिया कि, ''ज़ियारत सुन्न्त है।''

(पेज नं. 39 के आगे का)

करने वाले ही एक दूसरे को दखें। अगर लड़की को देखने के लिए लड़के वालों की जानिब से कुछ मस्तूरात और ख़्वातीन भी इस तक़रीब में शामिल हो जाएं तो कोई क़बाहत नहीं है।

लेकिन पूरा हलक़ए पारां और कारवाने एहबाब और चचाज़ाद, ख़ालाज़ाद, मामूंज़ाद भाईयों का पूरा टोला शरीके बज़्म हो, हरगिज़–हरगिज़ इस की इजाज़त नहीं होती। ولاحول ولاقوة الابالله العلى العظيم

मौला तबारक व तआ़ला हमें मिज़ाजे शरीअ़त को समझने की तौफ़ीक़े रफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए और हमारे क़ल्ब व क़ालिब और अजसाम व अरवाह की दुरूस्तगी का सामान फ़राहम फ़रमाए।

मुश्रिक कौन? क़िस्त नं. 3

अज़ : मुहम्मद आ़क़िब खरबे क़ादरी शाफ़ई

अपने ख़ुदसाख़्ता शिर्क का भरम क़ायम रखने के लिए अशफ़ाक़ सनाबली ने अपने किताबचे में मज़ीद यह आयतें भी पेश की हैं, तर्जुमा : ''बेशक वो जिन को तुम अल्लाह के सिवा पूजते हो, तुम्हारी तरह बंदे हैं, तो उन्हें पुकारो। फिर वो तुम्हें जवाब दें अगर तुम सच्चे हो। क्या उनके पांव हैं? जिन से चलें या उनके हाथ हैं? जिनसे गिरफ़्त करें या उनकी आंखें हैं? जिन से देखें या उनके कान हैं? जिनसे सुनें। तुम फ़रमाओ कि (ऐ काफ़िरो) अपने शरीकों को पुकारो और मुझ पर दाव चलो और मुझे मोहलत ना दो।'' (पा.9, अल–आ़राफ़, 195)

ईमाम अबू जाफ़र इब्ने जरीर तिब्री रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो इसके तहत फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''इस आयत में अल्लाह तआ़ला बुतों की पूजा करने वाले उन मुश्रिकीन से उन्हें ऐसी चीज़ की इबादत करने की वजह से तंबीह फ़रमाता है, जो उन्हें नफ़ा व ज़रर नहीं पहुंचा सकती यानी मूरतियां।'' तर्जुमा : ''यह तुम्हारी तरह बंदे हैं।'' की तफ़्सीर में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि, यह बुत तुम्हारे रब की मिलकियत है, जैसा कि तुम ख़ुद इसकी मिलकियत हो।'' (जामेअ़ अल–बयान फ़ी तावील अल–कुरआन–जि.13,स.321,मतबूआ़ः मोससता अर्रिसालत, बेरूत)

जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया, तर्जुमा : ''अल्लाह ही का है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है।'' (अल–बक़रह–284)

ग़ौसे आ़ज़म शैख़ अ़ब्दुल क़ादिर जीलानी रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो व अरदाह अ़ना अपनी तफ़्सीर बनामे ''तफ़्सीरे जीलानी'' के नाम से मशहूर है, में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''(यह तुम्हारी तरह बंदे हैं) यानी यह तुम्हारी तरह मख़लूक़ हैं, बल्कि तुम से भी गए गुज़रे हैं। इस लिए कि यह जमादात हैं, जिनमें कोई शऊर नहीं। तुम लोगों ने कैसे उन्हें अपना माबूद ठहरा लिया कि तुम अल्लाह की इबादत की तरह उनकी इबादत करते हो।'' (तफ़्सीरूल जीलानी, ज़ेरे आयते मज़कूरा–जि.2, स.180, मतबूआ़ : मरकज़ अल–जीलानी ललजूस अल–अ़लमियत, अस्तनबूल)

इस तफ़्सीर से यह बात भी वाज़ेह हो गई कि, तर्जुमा : ''यह तुम्हारी तरह बंदे हैं'' का इतलाक़े लग़वी (डिशनरी) ऐतेबार से मुजाज़न बुतों पर भी किया जा सकता है। जैसा कि आयत में हुआ है। लेहाज़ा इन अलफ़ाज़ को बुनियाद बना कर यह इसरार

करना कि, यहां अम्बिया व औलिया ही मुराद हैं। वहाबियों की कुरआन की तफ़्सीर के साथ साथ अ़रबी ज़बान से भी ला इल्मी का सुबूत है।

4) तर्जुमा : ''और अल्लाह के सिवा उसकी बंदगी ना कर, जो ना तेरा भला कर सके ना बुरा। फिर अगर ऐसा करे तो उस वक़्त तू ज़ालिमों में से होगा।'' (पा.11, सूरए यूनुस : 106)

ला तदअ़ का लफ़्ज़ी मानी है ''ना पुकार''। यहां पर माबूद व ख़ुदा मान कर पुकारने से मना किया गया है। इसी लिए हम ने इस का तर्जुमा ''बंदगी ना कर'' किया है।

तफ़्सीरे बग़वी और जलालैन में है, तर्जमा : ''ना पुकार का मतलब है, ना पूज।'' (ज़ेरे आयते मज़कूरा)

ईमामे इब्ने जरीर तिब्री रहमहुमुल्लाह इस आयत की तफ़्सीर में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''यहां मुराद बुत और झूटे माबूद हैं। अल्लाह फ़रमाता है, तुम इनकी इबादत ना करो, इन से नफ़ा की उम्मीद पर या ज़रर के ख़ौफ़ से। इस लिए कि यह ना नफ़ा पहुंचा सकते हैं ना नुक़्सान।'' (जि.15, स.218)

5) तर्जुमा : ''और इस के सिवा जिन्हें तुम पूजते हो, खजूर की गुठली के छिलके तक के मालिक नहीं। तुम उन्हें पुकारो तो वो तुम्हारी पुकार ना सुनें और बिलफ़र्ज़ सुन भी लें तो तुम्हारी हाजत रवाई ना कर सकें और क़ियामत के दिन वो तुम्हारे शिर्क से मुंकिर होंगे और तुझे कोई ना बताएगा। उस बताने वाले की तरह।'' (पा.22, सूरए फ़ातिर–13,14)

इस आयतमें وَالَّذِيْنَ تَدْعُوْنَ की तफ़्सीर में ईमाने तिब्री अलैहिर्रहमा फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''अल्लाह तआ़ला फ़रमा रहा है, ऐ लोगो! तुम अल्लाह के सिवा जिन की इबादत करते हो, अल्लाह तआ़ला बुतों और झूटे माबूदों को उसके साथ शरीक ठहराने वालों से ख़िताब फ़रमा रहा है।''

तफ़्सीरे बग़वी और जलालैन में है, तर्जुमा : ''आयम में अल्लाह के सिवा से मुराद बुत हैं।''

तफ़्सीर इब्ने कसीर में है, तर्जुमा : ''अल्लाह के सिवा से मुराद वो बुत और मूरतियां हैं जो मुश्रिकीन की मुक़र्रब फ़रिशतों के लिए गढ़ी हुई शक्लों पर थीं।''

6) तर्जुमा : ''और अगर तुम उनसे पूछो, आसमान और ज़मीन किस ने बनाए? तो ज़रूर कहेंगे, अल्लाह ने। तुम फ़रमाओ भला बताओ तो वो जिन्हें तुम अल्लाह के सिवा पूजते हो, अगर अल्लाह मुझे कोई तक्लीफ़ पहुंचाना चाहे तो क्या वो उसकी भेजी तक्लीफ़ टाल देंगे? या वो मुझ पर महरबानी फ़रमाना चाहे तो क्या वो उसकी महरबानी को रोक रखेंगे? तुम फ़रमाओ, अल्लाह मुझे बस है, भरोसे वाले उस पर भरोसा करें।'' (पा.24, सूरए ज़ुमर–38)

ईमामे इब्ने जरीर रहमतुल्लाह तआ़ला अलैह इस की तफ़्सीर में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''अल्लाह तआ़ला अपने नबी ﷺ से फ़रमा रहा है, ऐ नबी! अगर आप बुतों को अल्लाह के बराबर समझने वाले उन मुश्रिकों

से पूछें कि, आसमानों और ज़मीन को किस ने बनाया? तो ज़रूर कहेंगे कि, अल्लाह ने।''

''मिन दूनिल्लाह'' की तफ़्सीर में फ़रमाया, तर्जुमा : ''अल्लाह के सिवा से मुराद बुत और झूटे माबूद हैं।''

इस आयत में अल्लाह तआला ने ''मिन दूनिल्लाह (अल्लाह के सिवा)'' को मुअन्नस की ज़मीरों और मुअन्नस के सेग़ों से ज़िक्र किया है। هُنَّ كَشِفٰت और هُنَّ ممسِكٰتُ वग़ैरह मुअन्नस के अलफ़ाज़ हैं। इस लिए कि मुश्रिकीने अ़रब अपने माबूदों को मुअन्नस गुमान करते थे। उन्होंने अपने बुतों के मुअन्नस नाम रखे हुए थे। मस्लन लात, मुनात, उज़्ज़ह वग़ैरह। अगरचे पिछली आयतों में किसी ख़ास ऐतेबार से मुज़क्कर के अलफ़ाज़ इस्तेमाल हुए, मगर इस आयत में ख़ासतौर पर झूटे ख़ुदाओं के इज्ज़ और बेबसी को साबित किया जा रहा है और बुतों का मुअन्नस होना उनके कमाले ज़ोअ़फ़ (कमज़ोरी) की तरफ़ इशारा है। इस लिए यहां ख़ुसूसियत के साथ मुअन्नस के अलफ़ाज़ लाए गए। ताकि इसके ज़रिए से उन झूटे ख़ुदाओं और उनके पुजारियों की ज़िल्लत हो और उनकी बेवक़्अ़ती (बेइज़्ज़ती) ज़ाहिर हो। चुनांचे तफ़्सीरे बैज़वी में है, तर्जुमा : ''अल्लाह तआ़ला ने झूटे ख़ुदाओं की इंतेहाई कमज़ोरी को जतलाने के लिए काशिफ़ात और ममसिकात (सीग़ए मुअन्नस के साथ) फ़रमाया। इस बिना पर कि मुश्रिकीन उन्हें मुअन्नस की सिफ़त से मुतस्सिफ़ (तआ़रुफ़) करते थे।''

अ़ल्लामा हाफ़िज़ुद्दीन अबुल बरकात नस्फ़ी रहमतुल्लाह तआ़ला अन्हो अपनी तफ़्सीर में इस आयत के तहत फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''मिन दूनिल्लाह को मुअन्नस के अलफ़ाज़ से इस लिए ज़िक्र किया, क्योंकि वो मुअन्नस हैं और वो लात, उज़्ज़ह और मनात हैं और इसमें मुश्रिकीन और उनके माबूदों की हतक (बे वक़्अ़ती) को ज़ाहिर करना है।'' (मदारकुल तंज़ील)

मुहम्मद सैय्यद तनतावी मिस्री अपनी तफ़्सीर में लिखते हैं, तर्जुमा : ''अल्लाह ﷻ ने उन ख़्याली ख़ुदाओं की तहक़ीर के तौर पर उन्हें तानीस (मुअन्नस की अ़लामत) के साथ ज़िक्र फ़रमाया। इस लिए कि मुश्रिकीन उन्हें मुअन्नस नामों से पुकारते थे। मस्लन लात, उज़्ज़ह, मनात वग़ैरह।'' (अल–तफ़्सीर अल–वसीत)

क़ारईने किराम! मज़कूरा आयत में ''मिन दूनिल्लाह'' से अल्लाह के महबूब बंदे यानी अम्बियाए किराम और औलियाए किराम हरगिज़ मुराद नहीं हो सकते। जैसा कि वहाबियों ने दावा किया है। इस लिए कि अगर उन मुक़द्दस हस्तीयों को मुराद लिया जाए तो यह लाज़िम आएगा कि, अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में उन प्यारों को मुअन्नस के अलफ़ाज़ से याद करके उनकी तौहीन और तहक़ीर फ़रमाई है और उनका मज़ाक़ उड़ाया है और ऐसा मानी कम अज़ कम कोई ईमान वाला तो हरगिज़ मुराद नहीं ले सकता। अलबत्ता वहाबियों से यह बईद

नहीं जबकि इससे बड़ी बड़ी गुस्ताख़ियों का इरतेकाब करके उस पर डटे हुए हैं।

क़ारेईने किराम! ख़ुदारा इंसाफ़ करें। तमाम मुतक़द्देमीन व मुताख़रीन, मुफ़स्सेरीन ने इन जैसी तमाम आयतों में मुश्रिकीन का बुतों को ख़ुदा समझ कर पुकारना मुराद लिया है। हत्ताकि हाफ़िज़ अबुलफ़िदा इस्माईल इब्ने कसीर दमिश्की शफ़ई (मुतवफ़्फ़ी–774 हि.) जिन पर वहाबिया काफ़ी ऐतेमाद करते हैं, उनकी तफ़्सीर इब्ने कसीर मारकेट में मौजूद है। इसी तरह क़ाज़ी मुहम्मद बिन अ़ली शोकानी (मुतवफ़्फ़ी : 1250 हि.) की तफ़्सीर फ़तेह अल–क़दीर फ़ी इल्मुल तफ़्सीर भी अ़रब मुमालिक में बाआसानी दस्तियाब है। वहाबियों के उन मोअ़तेमद मुफ़स्सेरीन ने भी अपनी तफ़्सीरों में उन जैसी तमाम आयतों में मुश्रिकीन का बुतों को पुकारना ही मुराद लिया है। यहूद व नसारा कुरआन की लफ़्ज़ी तहरीफ़ (बदलना) तो ना कर सके, मगर अपने एजंटों के ज़रिए कुरआन की मानवी तहरीफ़ करने में किसी हद तक कामियाब नज़र आते हैं। ठीक यही रविश सहाबए किराम अलैहिमुर्रिज़वान के ज़माने में ख़्वारिज की थी। जैसा कि बुख़ारी के हवाले से गुज़रा।

कुरआन मजीद की मज़कूरा आयतों और उन जैसी दूसरी आयतों में ''मिन दूनिल्लाह'' यानी अल्लह के सिवा, से अम्बिया व औलिया नहीं, बल्कि बुत मुराद हैं और उन्हें पुकारने वालों से हम सुन्नी नहीं बल्कि मुश्रिकीने अ़रब मुराद हैं और चूंकि उनका पुकारना अपने बुतों को ख़ुदा और इबादत का मुस्तहिक़ समझ कर था, इस लिए यह पुकारना इबादत और शिर्क है। इस पर अगरचे तमाम मुफ़स्सेरीन का इज्माअ़ व इत्तेफ़ाक़ है। मगर इसी के साथ ख़ुद कुरआने मजीद की दूसरी आयतों में भी यह दलील मौजूद है कि मज़कूरा आयात में ''मिन दूनिल्लाह'' से क़ब्र वाले औलिया हरगिज़ मुराद नहीं हो सकते। मिसल के तौर पर कुरआन की इस आयते करीमा में ग़ौर फ़रमाएं, तर्जुमा : ''और उन्हें बुरा भला ना कहो, जिनको वो अल्लाह के सिवा पुकारते हैं कि वो अल्लाह की शान में बे अदबी करेंगे, ज़्यादती और जहालत से।''(पा.7, अल–इनामः 108)

हाफ़िज़ इब्ने कसीर इस आयत की तफ़्सीर में लिखते हैं, तर्जुमा : ''ईमाम अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने मेअ़मर से उन्होंने क़तादा से रिवायत की कि, क़तादा ने फ़रमाया, मुसलमान कुफ़्फ़ार के बुतों की बुराई बयान करते, तो कुफ़्फ़ार भी अल्लाह को दुश्मनी और जहालत के सबब बुरा कहते।'' इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई ولاتسبوالذين الخ

अगर इस आयत में मिन दूनिल्लाह से नबियों और वलियों को और उनके पुकारने वालों से हम सुन्नियों को मुराद लिया जाए तो दो बड़ी ख़राबियां लाज़िम आएंगी।

1) सहाबए किराम नबियों और वलियों को बुरा भला कहते थे।

2) जब नबियों और वलियों की बुराई की जाती तो उनको पुकारने वाले उसके बदले में अल्लाह को बुरा भला कहते।

हालांकि सहाबए किराम अलैहिमुर्रिज़्वान से मुतअ़ल्लक़ कोई सोच भी नहीं सकता कि, वो किसी नबी या वली की अदना बे अदबी करने को सोचें भी और नजदी वहाबी फ़िरक़ा जो अपने आपको अहले तौहीद और अहले सुन्नत को काफ़िर व मुश्रिक क़रार देता है, नबीयों और वलीयों की शान में शदीद तौहीन करता रहता है। मगर इसके बदले में किसी जाहिल से जाहिल सुन्नी के दिल में यह वसवसा भी नहीं आता कि, वो वहाबियों की दुश्मनी में अल्लाह को गाली दे।

लेहाज़ा मानना पड़ेगा कि, मिनदूनिल्लाह से क़ब्र वाले बुज़ुर्ग नहीं, बल्कि बुत और उनको पुकारने वालों से कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन मुराद हैं इसी तरह अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाता है, तुर्जमा : ''और अल्लाह के सिवा तुम्हारा ना कोई वली यानी हिमायती है, ना मददगार।'' (अलबक़रा–107)

अगर यहां मिनदूनिल्लाह से अम्बिया और औलिया को मुराद लिया जाए तो कुरआन मजीद की इस आयत का इंकार लाज़िम आएगा। तर्जुमा : ''तुम्हारा वली नहीं मगर अल्लाह, उसका रसूल और ईमान वाले।''

इसी के साथ एक और दलील मुलाहिज़ा फ़रमाएं। अल्लाह ﷻ ने फ़रमाया, तर्जुमा : ''बेशक तुम और तुम कुछ तुम अल्लाह के सिवा पूजते हो, सब जहन्नम का इंधन हैं। जिसमें तुम्हें जाना है।'' (पा. 17, सूरए अम्बिया–98)

इस आयत में अगर अल्लाह के कलाम का मुख़ातिब मुश्रिकीन की बजाए नबियों और वलियों को पुकारने वाले सुन्नी मुसलमानों को माना जाए और मिनदूनिल्लाह से अम्बिया और औलिया को मुराद लिया जाए तो लाज़िम आएगा कि (मआ़ज़ल्लाह) सारे अम्बिया और औलिया जहन्नम का इंधन हैं। जबकि यह बदाहतन बातिल है। लेहाज़ा माना पड़ेगा कि, मिनदूनिल्लाह से क़ब्र में आराम फ़रमा, अल्लाह के महबूब बंदे नहीं। बल्कि बुत मुराद हैं। इसीलिए इस के फ़ौरन बाद अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया, तर्जुमा : ''अगर यह ख़ुदा होते, जहन्नम में ना जाते और उन सब को उस में हमेशा रहना है।'' (पा.17, सूरए अम्बिया, आ.99)

मुश्रिकीने अ़रब और सुन्नियों के अ़क़ीदे का फ़र्क़ :

क़ारेईने किराम ! आपने देख लिया कि, अपनी ख़ुदसाख़्ता तौहीद के यह झूटे अ़लम बरदार किस तरह कुरआने करीम की मानवी तहरीफ़ के संगीन जुर्म के मुरत्तकब हैं। अब रहा यह सवाल कि, कुफ़्फ़ारे अ़रब भी बुतों से इसी अ़क़ीदे के साथ मदद मांगते थे, जिस अ़क़ीदे के साथ हम अहले सुन्नत अम्बिया व औलिया से मदद मांगते हैं। यानी ख़लिक़े हक़ीक़ी अल्लाह ही को मानते थे और बुतों में अ़ताई कूव्वत तस्लीम करते हुए उन्हें अल्लाह की बारगाह में वसीला और सिफ़ारशी बनाते थे।

निकाह एक मज़बूत क़ानूने फ़ितरत

अज़ : मुफ़्ती ज़मीम अहमद मिस्बाही, नागपूर

फ़रमाने बारी तआ़ला है, तर्जुमा : ''निकाह में लाओ जो औ़रतें तुम्हें ख़ुश आएं। दो–दो और तीन–तीन और चार–चार, फिर अगर डरो कि दो बीवियों को बराबर ना रख सकोगे, तो एक ही करो।'' (तर्जुमा : रज़विया)

हज़रत अ़क्रमा ने सैय्यदुल मुफ़स्सिरीन हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़िअल्लाह तआ़ला अन्हुम से रिवायत की कि, ''कुरैश दस–दस बल्कि उससे ज़्यादा औ़रतें करते थे और जब उनका बार ना उठ सकता तो जो यतीम लड़कियां उनकी सरपरस्ती में होतीं, उनके माल ख़र्च कर डालते।'' इस आयत में फ़रमाया गया कि, ''अपनी इस्तेताअ़त देख लो और चार से ज़्यादा ना करो ताकि तुम्हें यतीमों का माल ख़र्च करने की हाजत पेश ना आए।'' (माख़ूज़े अज़ : ख़ज़ाईनुल इरफ़ान)

मस्अ़ला :

आयते करीमा से मालूम हुआ कि, आज़ाद मर्द के लिए एक वक़्त में चार औ़रतों से ज़्यादा निकाह में रखना किसी के लिए जाईज़ नहीं। सिवाए रसूले अकरम ﷺ के। कि यह आपके ख़साईस में से है।

यह भी मालूम हुआ कि बीवियों के दर्मियान अ़दल फ़र्ज़ है। यह अ़दल और बराबरी लिबास में, खाने पीने में, रहने की जगह में और रात को रहने में लाज़िम है। इन उमूर में सब के साथ यकसां सुलूक हो।

यह भी मालूम हुआ कि, निकाह में बालिग़ और बालग़ा की पसंद और नापसंद का ऐतेबार है और अहले ख़ाना, ख़्वेश व अक़ारिब और दोस्त एहबाब की पसंद और नापसंद सानवी दर्जे की चीज़ है। क्योंकि हुक्मे कुरआनी, ''निकाह में लाओ, जो तुम्हें ख़ुश आएं।'' निकाह करने वालों की तरफ़ मुतवज्जोह है। लेहाज़ा अगर जानिबीन के अहले ख़ाना और मुतअ़ल्लिक़ीन को भी पसंद आ जाएं तो सुब्हानअल्लाह। वरना निकाह करने वालों की वो पसंद जो मिज़ाजे शरिअ़त से मुत्सादिम ना हो, हुर्फ़े आख़िर तसव्वुर की जाए और रिशता तैय कर लिया जाए। इसी में दोनों जहां की बेहतरी और भलाई पोशीदा है।

नीज़ इशारतन यह भी मालूम हुआ कि, बालिग़ और बालग़ा निकाह करने वाले एक दूसरे को देख सकते हैं। क्योंकि हुक्मे कुरआनी है, ''उन औ़रतों से निकाह करो, जो तुम्हें ख़ुश आएं।'' और ज़ाहिर है कि देखने से जो यक़ीन हासिल होगा, वो सुन कर हासिल नहीं होता। अगरचे बसाओक़ात सुन कर भी काफ़ी हद तक इत्मेनान हासिल हो जाता है। लेकिन बावजूद इसके अगर एक दूसरे को देख लें तो बेहतर है। ताकि यह मुक़द्दस बंधन और पाक रिशत, पाएदारी, इस्तेहकाम और मज़बूती की ज़ंजीरों में जकड़ जाए और ज़िन्दगी की आख़िरी सांस तक यह रिशता क़ायम और बरक़रार रहे। यह भी मालूम हुआ कि, निकाह करने वालों को एक दूसरे को देखने की जो मुख़्तसर सी इजाज़त है, वो हुदूदे शरअ़ में रहते हुए है। लेहाज़ा सिर्फ़ और सिर्फ़ निकाह **(आगे का पेज नं. 33 पर)**

चंद मुम्ताज़ वज़ाईफ़

अज़ : डॉ. मुहम्मद अफ़ज़ाल बरकाती, मेडिकल चेम्बर, रेल्वे रोड, अटावा

हज़रत ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाह तआ़ला अन्हो से मंकूल चंद वज़ाईफ़ पेश किए जाते हैं जो मिल्लते इस्लामिया के दर्द की दवा और कुर्बे इलाही हासिल करने का ज़रिया हैं।

ज़ियारते रसूले मक़बूल ﷺ :

हज़रत ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो फ़रमाते हैं कि, ''अगर कोई शख़्स ख़्वाब में रसूले अकरम ﷺ की ज़ियारत करना चाहता है तो वो पाक साफ हो कर जुमा की शब को दो रकात नमाज़े नफ़िल इस तरह अदा करे कि, हर रकात में सूरए फ़ातेहा के बाद एक बार आयतल कुर्सी और पंद्रह बार सूरए अख़्लास पढ़े। सलाम फेरने के बाद निहायत आ़जिज़ी से बारगाहे इलाही में रसूले करीम ﷺ की ज़ियारत से मुशर्रफ़ होने के लिए दुआ़ मांगे और फिर बिस्तर पर चुप चाप सो जाए। अल्लाह ﷻ के फ़ज़्ल से वो हुज़ूर ﷺ की ज़ियारत से मुशर्रफ़ होगा। अगर पहली शब दुर्रे मक़्सूद हासिल ना हो तो दूसरी शब फिर यही अ़मल करे। दूसरी शब भी नाकाम रहे तो तीसरी शब फिर यही अ़मल करे। इंशाअल्लाह! किसी ना किसी शब गोहरे मक़्सूद हाथ आ जाएगा।''

मुसीबत से निजात के लिए :

हज़रत ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो का क़ौल है कि, ''जो शख़्स मुसीबत के वक़्त आयते करीमा لَآاِلٰهَ اَلَّآ اَنتَ سُبحانَکَ اِنِّی کُنتُ مِنَ الظَّالِمِین की बकसरत तिलावत करे, अल्लाह ﷻ उसकी मुसीबत दूर करेगा।''

हज़रत ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो से मंकूल है कि, ''जो शख़्स आयतल कुर्सी पढ़ कर घर के अंदर दाख़िल होता है, अल्लाह ﷻ उसके घर से मुफ़्लिसी दूर कर देता है और आयतल कुर्सी बकसर पढ़ने वाले का माल चोरी से महफ़ूज़ रहता है और अल्लाह ﷻ अपनी बख़्शिश व रहमत के दरवाज़े उस पर खोल देता है।''

गुमशुदा की तलाश :

हज़रत ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो फ़रमाते हैं कि, ''अगर किसी का कोई अ़ज़ीज़ गुम हो गया हो तो वो यह दुआ़ कसरत से पढ़ा करे। अल्लाह ﷻ गुमशुदा को वापस ले आएगा।''

ياجامع الناس ليوم لاريب فيه اجمع على ضامن

आंखों की रौशनी का अ़मल :

हज़रत ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो फ़रमाते हैं कि, ''नज़र की तेज़ी और आंखों की हर बीमारी से महफ़ूज़ रहने के लिए यह अ़मल बहुत मुफ़ीद है। हर नमाज़ के बाद لااله الاهو القيوم दो मरतबा पढ़ कर हाथ के अंगूठों पर दम किया जाए और फिर عنت الوجوه للحى القيوم पढ़ कर दोनों अंगूठों पर दम करके आंखों के पपूटों पर मले।''